संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित
ऋषि प्रसाद
हिन्दी
मूल्य : रु. ६-००
अंक : १६३
जुलाई २००६
आज पूज्य बापूजी के लाखों-करोड़ों शिष्यों को उनके सत्संग में आत्मिक आनंद का प्रसाद सहज में मिल रहा है, परंतु इसके मूल में बापूजी की कितनी साधना, त्याग, वैराग्य व तितिक्षा छुपी है यह तो वे ही जानें !
साधकों का पर्व : गुरुपूर्णिमा
SARDAR PATEL GUJARAT STAD
आश्रम में जगह न होने से कतारों में लगे पूज्य बापू के लाड़ले।
नजदीक से दर्शन होते ही श्रम दूर... हो जायेंगे खुशहाल-निहाल...
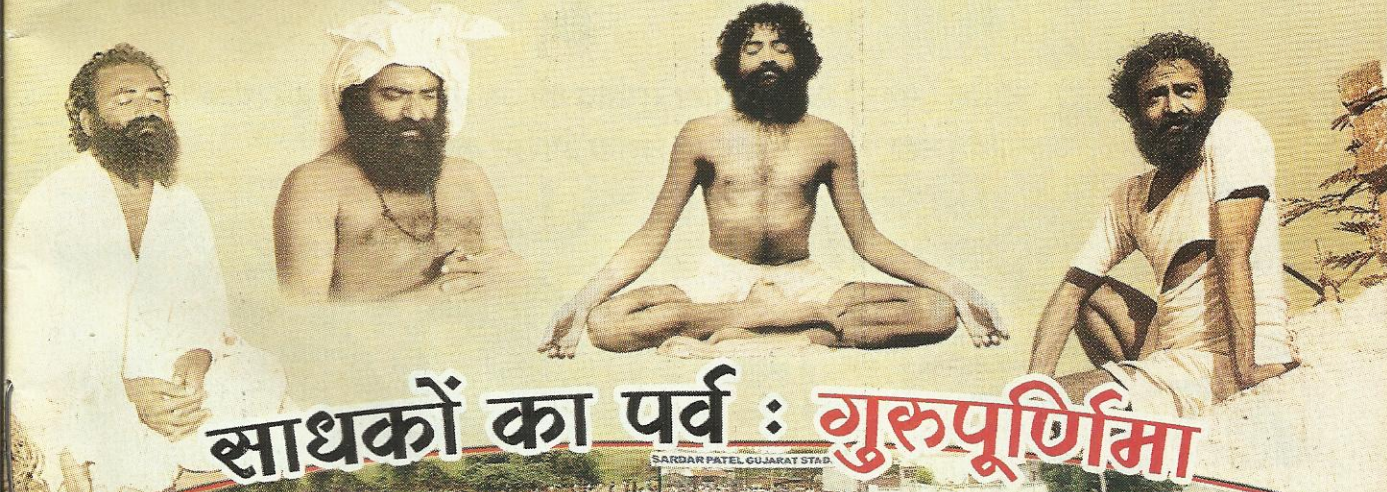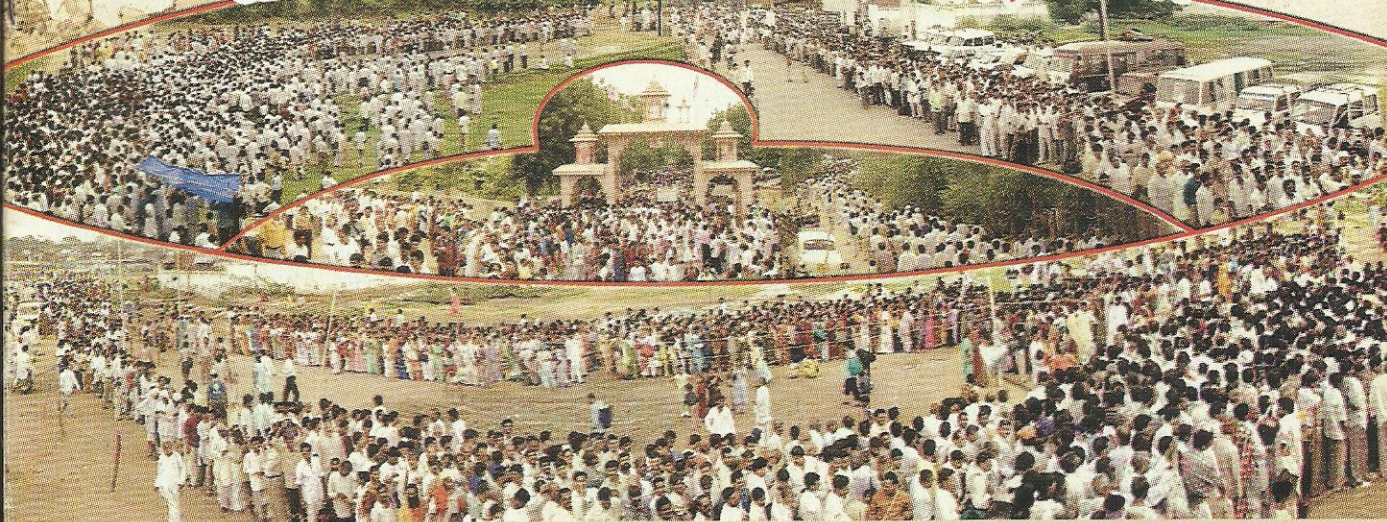
आश्रम द्वारा विद्यार्थी-उत्थान हेतु किये जा रहे सेवाकार्य

गोंदिया (महा.) के बालक सारस्वत्य-मंत्रानुष्ठान करते हुए एवं
सुमेरपुर, जि. पाली (राज.) के विद्यार्थी ध्यान द्वारा सुषुप्त योग्यताओं को जागृत करते हुए।
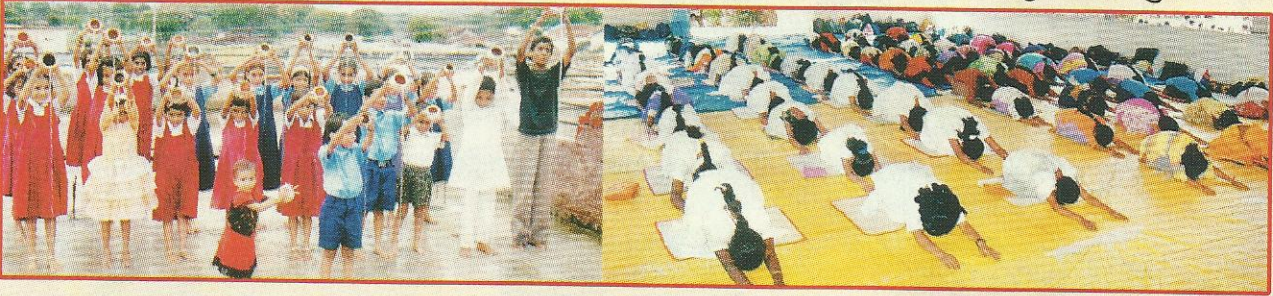
रामनगर, जि. नांदेड़ (महा.) के नौनिहाल सूर्यदेव को अर्घ्यदान करते हुए तथा
जलगाँव (महा.) की बालिकाएँ शशक आसन करतीं हुईं।

लींबडी जि. सुरेन्द्रनगर(गुज.) के बच्चे योगासन करते हुए तथा लुधियाना (पंजाब) के
विद्यार्थी व्यसनों से होनेवाली हानियों का कलात्मक प्रदर्शन करते हुए।
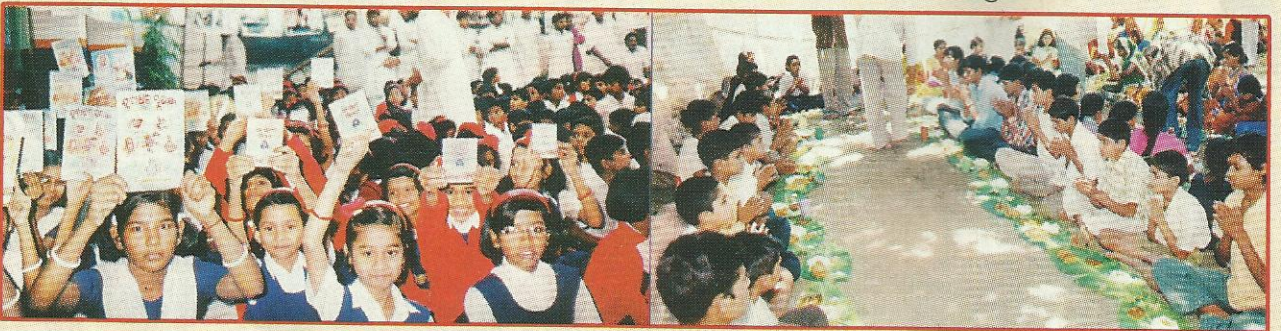
पदमपूर, जि. बलांगीर (उड़ीसा) के विद्यार्थियों में सत्साहित्य-वितरण एवं
कासमपुरा, जि. जलगाँव (महा.) में जपयज्ञ के पश्चात भोजन-प्रसाद का वितरण।

वर्ष : १७ अंक : १६३ जुलाई २००६ आषाढ़-श्रावण वि.सं. २०६३ मूल्य : रु. ६/-

ऋषि प्रसाद

इस अंक में

साधकों का पर्व : गुरुपूर्णिमा पृष्ठ : ०४

किनके रहें पास, किनसे रहें दूर ? पृष्ठ : ०८

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : दिव्य भास्कर, भास्कर हाऊस, मकरबा, सरखेज-गाँधीनगर हाईवे, अहमदाबाद - ३८००५१
सम्पादक : श्री कौशिकभाई वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक	रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक	रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक	रु. २००/-
(४) आजीवन	रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक	रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक	रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक	रु. ३००/-
(४) आजीवन	रु. ७५०/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक	US $ 20
(२) द्विवार्षिक	US $ 40
(३) पंचवार्षिक	US $ 80
(४) आजीवन	US $ 200

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	१२०	५००
नेपाल, भूटान व पाक में	१७५	७५०
अन्य देशों में	US $ 20	US $ 80

कार्यालय : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें।

(गुरुपूर्णिमा : ११ जुलाई)

साधकों का पर्व : गुरुपूर्णिमा
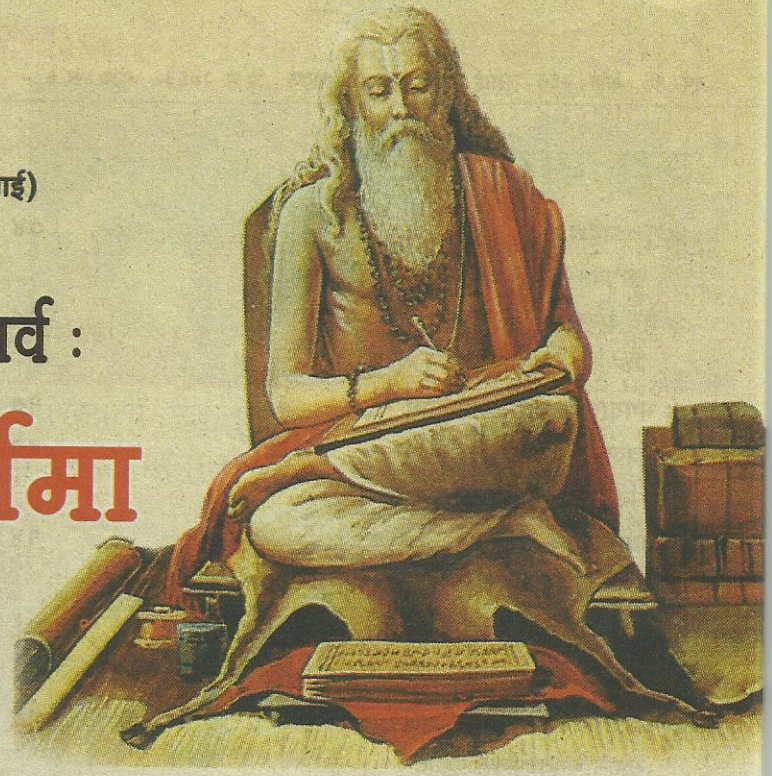
(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

मरणशील जीवन में जिसने अमरता को पाना पसंद किया है, क्षणभंगुर जीवन में जिसने सनातन को पाना पसंद किया है ऐसे प्रभु के प्यारे, संतों के दुलारे साधकों का महापर्व है गुरुपूर्णिमा ।

कोई आदरणीय होते हैं, कोई माननीय होते हैं, कोई वंदनीय होते हैं, कोई श्रद्धेय होते हैं, कोई प्रशंसनीय होते हैं किंतु सत्यस्वरूप में जगानेवाले, तीनों तापों से बचानेवाले साक्षात् परब्रह्म-परमात्म-स्वरूप तत्त्ववेत्ता भगवान व्यास तो पूजनीय हैं । फिर चाहे भगवान लीलाशाह के रूप में व्यास हों, चाहे मुनि शुकदेवजी के रूप में व्यास हों, चाहे परमहंस रामकृष्ण के रूप में व्यास हों... 'व्यास' किसी व्यक्ति का नाम नहीं है । 'व्यास' उनको कहते हैं जो हमारे जीवन की बिखरी हुई धाराओं को सुव्यवस्थित करें, हमारे अंदर छुपे हुए खजाने को खोलने की कुंजी हमें बतायें । हमको उठाने की आध्यात्मिक व्यवस्था जो जानते हैं वे आध्यात्मिक अनुभव-संपन्न महापुरुष 'व्यास' हैं ।

ऐसे व्यासस्वरूप संतों के, सद्गुरुओं के पूजन का दिवस ही व्यासपूनम है, गुरुपूनम है ।

गुरु तीन प्रकार के होते हैं :

(१) देवगुरु

(२) सिद्धगुरु

(३) मानवगुरु

देवगुरु जैसे देवर्षि नारद हैं और बृहस्पतिजी हैं... । सिद्धगुरु कभी-कभी किसी परम पवित्र, परम सात्त्विक व्यक्ति को मार्गदर्शन देते हैं । जैसे, गुरु दत्तात्रेय... परंतु मानवगुरु तो हमारे बीच रहते हुए, हमारे जैसे लिखते-पढ़ते, खाते-पीते, लेते-देते, हँसते-रोते यात्रा करते हैं । पग-पग पर विघ्न-बाधाओं को सहते हुए और उनका निराकरण करते हुए यात्रा करते हैं ।

परम तत्त्व को पाये हुए वे मानवगुरु हमारे मन की सारी समस्याओं तथा हमारी बुद्धि की उलझनों को जानते हैं और उनके निराकरण की व्यवस्था को भी जानते हैं । यहाँ तक कि हम भी

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुर्साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

अपने मन को उतना नहीं जानते जितना मानवगुरु जानते हैं ।

देवगुरु को प्रणाम है, सिद्धगुरु को भी प्रणाम है लेकिन मानवगुरु तो मानवजाति के परम हितैषी सिद्ध हुए हैं । उनको तो हम बार-बार प्रणाम करते हैं, उनका तो हम पूजन करते हैं ।

ऐसे सद्गुरु के प्रति श्रद्धा होना मानव-जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि है ।

जिसके जीवन में सद्गुरु के प्रति श्रद्धा नहीं है वह तो कंगाल है । चाहे उसके पास लाखों, करोड़ों, अरबों रुपये हों फिर भी वह कंगाल है । रावण के पास सोने की लंका थी, हिरण्यकशिपु का स्वर्ण का हिरण्यपुर था फिर भी हम उसे धनवान नहीं कहेंगे, कंगाल कहेंगे । जबकि श्रीरामजी परम धनवान थे, क्योंकि त्रिभुवनपति होते हुए भी वे विश्वामित्रजी की पैरचंपी करते थे, गुरुवर वसिष्ठजी के आश्रम में सेवा करते थे । धन्य थी श्रीरामजी की गुरुभक्ति ! उनको मेरा बार-बार प्रणाम...

गुरु के पूजन का दिन है - गुरुपूनम परंतु गुरुपूजा क्या है ?

गुरु बनने से पहले गुरु के जीवन में भी कई उतार-चढ़ाव आये होंगे, अनेक अनुकूलताएँ-प्रतिकूलताएँ आयी होंगी, उनको सहते हुए भी वे साधना में रत रहे, स्व में स्थित रहे, समता में स्थित रहे । वैसे ही हम भी उनके संकेतों को पाकर उनके आदर्शों पर चलने का, ईश्वर के रास्ते पर चलने का दृढ़ संकल्प करके तदनुसार आचरण करें तो यही बढ़िया गुरुपूजन होगा । हम भी अपने हृदय में गुरुतत्त्व को प्रकटाने के लिए तत्पर हो जायें- यही बढ़िया गुरुपूजा होगी ।

जिनके जीवन में सद्गुरु का प्रकाश हुआ है वास्तव में उन्हींका जीवन जीवन है, बाकी सब तो मर ही रहे हैं । मरनेवाले शरीर को जीवन मानकर मौत की तरफ घसीटे जा रहे हैं । धनभागी तो वे हैं जिनको जीते-जी जीवन्मुक्त सद्गुरु मिल गये...

जिनको जीवन्मुक्त सद्गुरु का सान्निध्य मिल गया, आत्मारामी संतों का संग मिल गया, वे बड़भागी हैं । अष्टावक्र महाराज को पाकर जनकजी अपनेको बड़भागी मानते हैं, वसिष्ठजी को पाकर श्रीरामचंद्रजी अपनेको बड़भागी मानते हैं, गुरु सांदीपनिजी को पाकर श्रीकृष्ण-बलराम अपनेको बड़भागी मानते हैं और गुरु गोविंदपादाचार्य को पाकर शंकराचार्यजी अपनेको बड़भागी मानते हैं, शंकराचार्यजी को पाकर तोटक अपनेको बड़भागी मानते हैं, श्री जनार्दन स्वामी को पाकर एकनाथजी और एकनाथजी को पाकर पूरणपोड़ा अपनेको बड़भागी मानते हैं तो श्री समर्थ को पाकर शिवाजी अपनेको बड़भागी मानते हैं। सुकरात का शिष्य कहे जाने में प्लेटो को आनंद आता है और प्लेटो का शिष्य कहलाने में अरस्तु गर्व का अनुभव करते हैं ।

ऐसे शिष्यों के पास चाहे ऐहिक सुख-सुविधाओं के ढेर हों, चाहे

गुरु के द्वार अहं लेकर जानेवाला व्यक्ति गुरु के ज्ञान को पचा नहीं सकता, हरि के प्रेमरस को चख नहीं सकता।
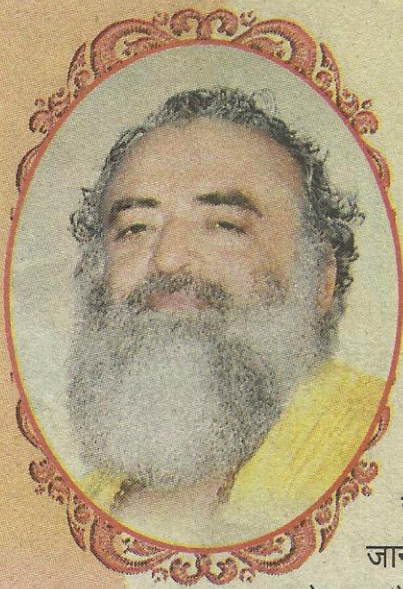
धनभागी हैं वे लोग जिनमें वेदव्यासजी जैसे आत्मसाक्षात्कारी पुरुषों का प्रसाद पाने की और बाँटने की तत्परता है !

अनेकों प्रतिकूलताएँ हों फिर भी वे मोक्ष मार्ग में जाते हैं । गुरु और शिष्य के बीच जो दैवी संबंध होता है उसे दुनियादार क्या जानें ? सच्चे शिष्य सद्गुरु के चरणों में मिट जाते हैं और सच्चे सद्गुरु निगाहों से ही शिष्य के हृदय में बरस जाते हैं ।

गुरुपूर्णिमा का पर्व गुरु के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने का पर्व है । शिष्य को गुरु से जो ज्ञान मिलता है वह शाश्वत होता है, उसके बदले में वह गुरु को क्या दे सकता है ? लेकिन वह कहीं कृतघ्न न हो जाय इसलिए अपने सद्गुरुदेव का मानसिक पूजन करके गुरुपूनम के निमित्त गुरुचरणों में शीश नवाते हुए प्रार्थना करता है : 'गुरुदेव ! हम आपको और तो क्या दे सकते हैं ? लेकिन इतनी प्रार्थना अवश्य करते हैं कि आप स्वस्थ और दीर्घजीवी हों ।

महापुरुषों की कृपा बरस ही रही है । देखना यह है कि हम दिल कितना खुला रखते हैं, हम उत्सुकता कितनी रखते हैं !

आपका ज्ञानधन बढ़ता रहे, आपका प्रेमधन बढ़ता रहे। हम जैसों का मंगल होता रहे और हम आपके दैवी कार्यों में भागीदार होते रहें । गुरुदेव ! आपकी प्रसन्नता दिनोंदिन बढ़ती रहे, आपका सामर्थ्य अधिकाधिक बढ़ता रहे ।

गुरुदेव ! आपके वचनों में हमारी प्रीति बनी रहे... आप जैसा हमें सुख-दुःख, मान-अपमान, लाभ-हानि, यश-अपयश आदि में सम देखना चाहते हैं, आपका वह शुभ संकल्प शीघ्र फले ।

गुरुदेव ! हम फूल नहीं तो फूल की पंखुड़ी ही आपके श्रीचरणों में अर्पित करते हैं, इसे स्वीकार करना...'

यह पर्व व्रत-उपवास का पर्व है, संयम-नियम का पर्व है और जीवन की शाम होने से पहले जीवनदाता को पाने का संकल्प करने का पर्व है ।

आज के दिन केवल दूध अथवा फल पर ही रहें तो अच्छा है नहीं तो अल्पाहार कर लें । श्वासोच्छ्वास की गिनती करें और गुरुदेव के बताये गये उपदेशों का मनन करें ।

जिन कारणों से तुम्हारी साधना में रुकावटें आती हैं, जिन विकारों के कारण तुम गिरते हो, जिस चिंतन तथा कर्म से तुम्हारा पतन होता है; उनको दूर करने के लिए प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व उठकर, स्नानादि से निवृत्त हो, पूर्वाभिमुख होकर आसन पर बैठ जायें ।

अपने इष्ट या गुरुदेव का स्मरण करके उनसे स्नेहपूर्वक मन-ही-मन बातें करें । बाद में १०-१५ गहरे श्वास लें और 'हरि ॐ' का गुंजन करते हुए अपनी दुर्बलताओं को मानसिक रूप से सामने लायें और ॐकार की पवित्र गदा से उन्हें कुचलते जायें ।

अगर बार-बार बीमार पड़ते हो तो उन बीमारियों का चिंतन करके उनकी जड़ को भी 'ॐ' की गदा से तोड़ डालें । बाद में बाहर से थोड़ा-बहुत उपचार करके उनकी डाली और पत्तों को भी नष्ट कर डालें । अगर काम-क्रोधादि मन की बीमारियाँ हैं तो उन पर भी ॐकार की गदा का

जिन देशों में ऐसे ब्रह्मवेत्ता गुरु हुए और उनको झेलनेवाले साधक हुए, वे देश उन्नत बने हैं ।

प्रहार करें । ॐ...ॐ... पवित्र उद्यम...

इसमें असफल हो जायें तब भी डरें नहीं । बार-बार प्रयत्न करें, हजार बार प्रयत्न करें । जितना कुसंस्कार गहरा होता है उतना सुपुरुषार्थ ज्यादा चाहिए । जो भाग्य के सहारे बैठा रहता है उसको तो रोना ही पड़ता है । आज का पुरुषार्थ ही कल का भाग्य बनता है, अतः पुरुषार्थ करो । भले ही पहले के कर्म अच्छे हों लेकिन वर्तमान में पुरुषार्थ न हो और संग हलका हो तो पहले के भक्ति-ज्ञान के संस्कार दब जाते हैं । पहले के कर्म अच्छे हों और वर्तमान में भी पुरुषार्थ करे तो भक्ति-ज्ञान निखरने लगता है ।

ज्यों-ज्यों भक्ति बढ़ती है, ज्ञान निखरता है, त्यों-त्यों मनुष्य सदाचारी बनता है । ज्यों-ज्यों मनुष्य सदाचारी बनता है, त्यों-त्यों भक्ति और ज्ञान पुष्ट होता है । भक्ति और ज्ञान पुष्ट होने पर साधक गुरुकृपा से सच्चिदानंदघन परमात्मा के अनुभव को पाने में भी कामयाब हो जाता है... परमात्मा का साक्षात्कार करने में सफल हो जाता है।

संत एकनाथ महाराज की वाणी
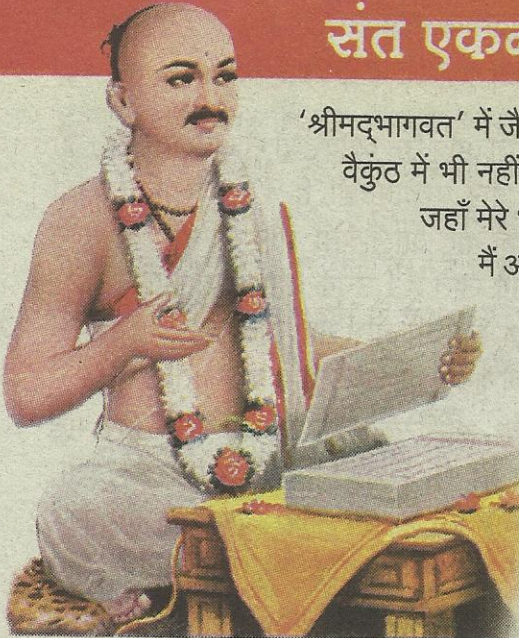
'श्रीमद्भागवत' में जैसे भगवान श्रीहरि कहते हैं : 'हे नारद ! मैं कभी-कभार वैकुंठ में भी नहीं रहता, योगियों के हृदय को भी लाँघ जाता हूँ लेकिन जहाँ मेरे भक्त गान (सुमिरन-ध्यान) करते हैं, हे नारद ! वहाँ मैं अवश्य रहता हूँ ।' उसी प्रकार एकनाथजी अपने अभंग में कहते हैं :

योगियांचे चिंतनीं न बैसे ।
यज्ञयागादिकांसीं जो न गिवसे ।
तो भाविकांचें कीर्तनासरिसें ।
नाचतसे आनंदें ॥

भावार्थ : योगीजनों के चिंतन-ध्यान में जो पूरी तरह नहीं समा पाते, यज्ञ-यागादि कर्मों से भी जो नहीं मिलते, वे भगवान श्रीहरि भक्तों के कीर्तन में उनके साथ आनंद में सराबोर होकर नाचते हैं ।

कीर्तनें होय सर्व सिद्धी । तुटती भवपाशू आधिव्याधी ।
एका जनार्दनीं नाहीं उपाधी । कीर्तन श्रवण केलिया ॥

भावार्थ : भगवत्कीर्तन से सर्व सिद्धियाँ मिलती हैं, भवपाश और आधि-व्याधि सब मिटती हैं । जो प्रीतिपूर्वक प्रभु-कीर्तन करते हैं, कीर्तन करते-करते बीच-बीच में खो जाते हैं, प्रभुमय हो जाते हैं उन्हें कष्ट नहीं सताता ।

गधा केवल चंदन के भार को वहन करता है, चंदन के गुण और खुशबू का उसे पता नहीं । ऐसे ही जिनकी देह में ही आसक्ति है वे केवल संसार का भार वहन करते हैं ।

किनके रहें पास, किनसे रहें दूर ?

नादान दोस्त से समझदार दुश्मन ज्यादा अच्छा है, क्योंकि उससे हमें सदा चौकन्ना रहना पड़ता है ।

सद्गुरु की सेवा से प्रेमाग्नि प्रचण्ड होकर झूठे मोह को भस्म कर देती है ।

'हमारे पास कौन रहें ? हम किनसे दूर रहें ?' – इन प्रश्नों ने आम लोगों को सदा उलझन में डाला है । क्योंकि हम जैसे लोगों के साथ रहते हैं, गुप्त रूप से उनके विचार और आदतें भी हमारे में आ जाती हैं । गुण-अवगुण सब संक्रामक हैं । कुछ लोगों से जीवन में नया उत्साह और उन्नति के लिए नवप्रेरणा मिलती है तो किसीसे कोई कुरुचि या विषैली आदत भी लग सकती है । अतः हमारे सबसे प्राचीन धर्मशास्त्र वेदों में इसका बड़ा नीर-क्षीर विवेचन किया गया है ।

उत वा यः सहस्य प्रविद्वान्
मर्तो मर्तं मर्चयति द्वयेन ।
अतः पाहि स्तवमान स्तुवन्तमग्ने
माकिर्नो दुरिताय धायीः ॥
(ऋग्वेद : १.१४७.५)

अर्थात् आप उन व्यक्तियों से सदैव दूर रहें, जो निंदक और परदोषदर्शी हैं । ऐसे व्यक्ति सदा दूसरों की कटु आलोचना और कमियाँ निकालने में ही लगे रहते हैं । उनके संग से सांसारिक और आत्मिक कोई भी लाभ नहीं होता बल्कि परदोष-दर्शन की क्षुद्र तथा नीच प्रवृत्ति बढ़ जाती है ।

इसके अतिरिक्त आप अज्ञानियों और मूढ़ जनों से दूर रहें । अज्ञानी व्यक्ति अपनी मूढ़ता, अज्ञानता, संकुचितता और अल्पज्ञता के कारण लोभातुर होकर रोग-शोक से दुःख पाते हैं ।

अज्ञान से अदूरदर्शिता उत्पन्न होती है । अज्ञानी की दर्शनपद्धति संकुचित होती है । वह उन चीजों को अनावश्यक महत्त्व देता है, जिनका वास्तव में साधारण-सा स्थान है । अज्ञानी लोग गुण, कर्म और स्वभाव के बदले पूर्वजों एवं माता-पिता के द्वारा अर्जित संपत्ति से मनुष्य की उच्चता-निकृष्टता परखते हैं । वे अपनी भेड़चाल से समझदार मनुष्यों को भी गुमराह करते हैं । अतः नादान दोस्त से

कटु वचन बोलना अंदर छिपे हुए पाप और दुष्ट वासना को प्रकट करनेवाला तथा दूसरों के चित्त को मलिन करनेवाला दोष है ।

समझदार दुश्मन ज्यादा अच्छा है, क्योंकि उससे हमें सदा चौकन्ना रहना पड़ता है ।

'ऋग्वेद' में प्रार्थना की गयी है कि –

मा नो निदे च वक्तवेऽर्यो रन्धीरराव्णे ।
त्वे अपि क्रतुर्मम ॥

'हे परमेश्वर ! जो मनुष्य कठोर और निंदनीय वचन बोलते हों, उनसे हम सदैव दूर रहें । कठोरता, रूक्षता, कर्कशता इत्यादि त्रुटियों से हमारा कोई सरोकार न हो । हमारे सब कार्य आपको ही समर्पित हों अर्थात् हम सदैव शुभकर्म ही करें ।' **(७.३१.५)**

रूक्षता और कर्कशता आसुरी प्रवृत्तियाँ हैं । ये उस कठोरता की प्रतीक हैं, जो असभ्य और दानवी प्रकृति के व्यक्तियों में पायी जाती हैं । कटु वचन या अश्लील भाषा का प्रयोग करनेवाला व्यक्ति पशु–तुल्य होता है क्योंकि वह भीतर से पशु–प्रवृत्तियों में ही जकड़ा रहता है । कटु वचन बोलना अंदर छिपे हुए पाप और दुष्ट वासना को प्रकट करनेवाला तथा दूसरों के चित्त को मलिन करनेवाला दोष है ।

सदा निंदा तथा क्रोध करनेवाले व कटु वचनों का प्रयोग करनेवाले व्यक्ति मानसिक दृष्टि से बीमार होते हैं । वे विवेक खोकर कुछ भी कर बैठते हैं । अतः उनसे आप सदा दूर ही रहें ।

आप सरस और प्रेममय रहें । पीड़ित और दुःखी के लिए सदा आपका हृदय खुला रहे । आगे लिखा है कि –

यो मा पाकेन मनसा
चरन्तमभिचष्टे अनृतेभिर्वचोभिः ।
आपइव काशिना संगृभीता
असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता ॥
(ऋग्वेद : ७.१०४.८)

मिथ्यावादी और असत्य भाषण करनेवाले झूठे व्यक्ति से दूर रहना ही अच्छा है । क्योंकि झूठे का व्यवहार कपटपूर्ण एवं स्वार्थमय होता है। वह स्वार्थ–साधन के लिए मित्र तथा संबंधियों से भी विश्वासघात कर सकता है । इसलिए दो–तीन बार परख करने के बाद झूठे का संग त्याग देना ही लाभदायक है ।

यस्तित्याज सचिविदं सखायं
न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति ।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति
नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम् ॥

जो अपने स्वार्थ–साधन के लिए किसीसे मित्रता कर लेते हैं और फिर अपना काम निकल जाने पर, स्वार्थ सिद्ध हो जाने पर उसे त्याग देते हैं, ऐसे लोगों से सावधान हो जाना चाहिए और फिर कभी उन पर विश्वास नहीं करना चाहिए । ऐसे धोखेबाजों को निंदा और अपयश का भागी बनना पड़ता है । **(ऋग्वेद : १०.७१.६)**

मा नो अग्नेऽव सृजो
अघायाऽविष्यवे रिपुवे दुच्छुनायै ।
मा दत्वते दशते मादते नो
मा रीषते सहसावन् परा दाः ॥

समझदार मनुष्य को चाहिए कि वह असाधुओं से बचकर साधु पुरुषों का संग करे । शुभकर्मों को ही करे तथा दुष्कर्मों से दूर रहे । **(ऋग्वेद : १.१८९.५)**
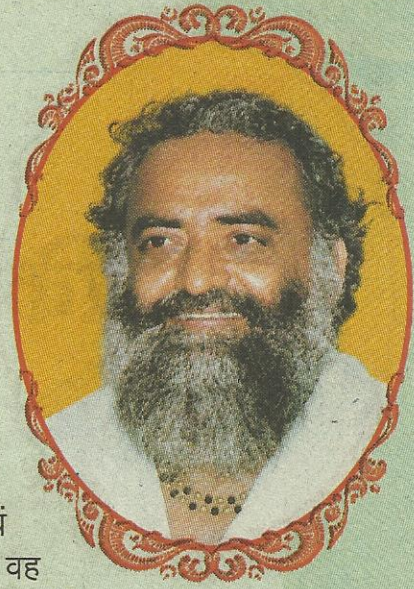
पंको हि नभसि क्षिप्तः क्षेप्सतस्य पतति मूर्ध्निः । आकाश में फेंका गया कीचड़ फेंकनेवाले के सिर पर ही गिरता है । अर्थात् महापुरुषों की निंदा करनेवाला स्वयं ही निंदित हो जाता है ।

'ऋग्वेद' में प्रार्थना की गयी है कि –'हे परमेश्वर ! हमारे सब कार्य आपको ही समर्पित हों अर्थात् हम सदैव शुभकर्म ही करें ।'

क्योंकि साधु पुरुषों के साथ रहने से आपको सुरुचि और सद्ज्ञान मिलता है ।

धर्म एव कृतः
श्रेयानिह लोके परत्र च ।
तस्माद्धि परमं नास्ति
यथा प्राहुर्मनीषिणः ॥

धार्मिक प्रवृत्तिवाले व्यक्तियों के साथ रहिये । उनसे आपको जीवन और जगत संबंधी उत्तमोत्तम रहस्य प्राप्त होंगे । उनके आचरण, वाणी, कर्म से आपके उन्नतिशील जीवन को प्रेरणा प्राप्त होगी ।

आयुर्नसुलभं लब्ध्वा नावकर्षेद् विशांपते ।
उत्कर्षार्थे प्रयतेत नरः पुण्येन कर्मणा ॥

यह दुर्लभ आयु पाकर मनुष्य को कभी पापकर्म नहीं करना चाहिए । समझदार व्यक्ति को सदा ही पुण्यकर्मों से अपनी और समाज की उन्नति के लिए कार्य करना चाहिए । इसके लिए आवश्यक है कि आप असाधु पुरुषों के संग को त्यागकर अच्छे विचार, शुभ संकल्प तथा मंगलमय, मृदु स्वभाववाले सज्जन पुरुषों का ही सान्निध्य लाभ लें ।

भगवान के माई-बाप कौन ?

तुम सद्गुरु में पूर्ण विश्वास रखो तो सांसारिक झकोले तुम्हें प्रभावित नहीं कर सकेंगे ।

एक बार संत सम्मेलन में एक पंजाबी संत आये थे । वे बड़े हट्टे-कट्टे और बड़े फक्कड़ थे। मेरे गुरुजी ने उनसे पूछा : ''महाराजजी ! हर चीज का कोई माई-बाप होता है। जैसे आपके-हमारे माई-बाप हैं, ऐसे कोई भगवान का भी तो माई-बाप होगा। वसुदेव-देवकी ने तो चलो, पूर्वजन्म में तप किया था और स्वयं भगवान ने वरदान दिया तो अवतार हो गया लेकिन उसके पहले, एकदम शुरुआत में भगवान का कोई माई-बाप तो होगा ?''

संत बोले : ''भगवान का माई-बाप ? भगवान का माई-बाप संत होता है।''

''महाराज ! कैसे ?''

''वसिष्ठजी ने दशरथजी को कहा कि शृंगी ऋषि से हवन कराओ। वे भगवान में रत रहनेवाले, समाधिस्थ रहनेवाले पुरुष हैं। वे आहुति देंगे तो अवश्य फलेगी, यज्ञपुरुष आयेंगे और फिर तुम भगवान को अपने घर में अवतरित कर लोगे। तो भगवान को बेटा बनाने की युक्ति संतों के पास है, वे भगवान के माई-बाप हो गये।''

दूसरी दृष्टि से देखें तो लोगों को भगवान के गुण, रूप, माहात्म्य एवं लीलाएँ बताकर उनके दिल में भगवान के प्रति श्रद्धा-भक्ति-प्रेम उत्पन्न करके भगवान के सगुण-साकार रूप के दर्शन अथवा निर्गुण-निराकार से एकत्व का साक्षात्कार भी तो संत ही कराते हैं। इस दृष्टि से भी भगवान को प्रकटानेवाले वे भगवान के माई-बाप हैं।

– सत्संग से

ॐ ऐं नमः   हरि ॐ   श्रीहरि

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

श्रीकृष्ण   लं

मंत्र, भगवन्नाम और गुरुमंत्र

वासुदेव   श्रीराम   नारायण   यं   रं

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

मंत्र, भगवन्नाम और गुरुमंत्र में क्या फर्क है ? कई प्रकार के मंत्र होते हैं । मनोरथपूर्ति के लिए भी कई तरह के मंत्र जपे जाते हैं और जरूरी नहीं है कि मंत्र भगवान का ही नाम हो । मानों, पाचनतंत्र कमजोर है और खाना पचाना है तो यह मंत्र है :

अगस्त्यं कुंभकर्णं च शनिं च वडवानलम् ।
आहारपरिपाकार्थं स्मरेद् भीमं च पंचमम् ॥

इससे आपका खाना पचेगा, पक्की बात है । नींद नहीं आती है तो सोने के समय **'शुद्धे शुद्धे महायोगिनी महानिद्रे स्वाहा ।'** ऐसा जप करें तो नींद आ जायेगी । नींद की गोली ले-लेकर भी जिन्हें नींद नहीं आयी, उन्हें भी इस मंत्र से नींद आने लगी । तो इस लोक अथवा परलोक की कुछ सुविधा पाने का मंत्र होता है । ऐसे ही शादी-विवाह का, विघ्न-बाधाओं को टालने का, कार्यसाफल्य, रोगनिवृत्ति, शत्रु-दमन व अकाल मृत्यु टालने का भी मंत्र होता है ।

दूसरा होता है भगवन्नाम । मंत्र में तो जापक की श्रद्धा, मंत्र के आन्दोलन और मंत्र-जप की विधि काम करती है किंतु भगवन्नाम में इनके साथ-साथ भगवान की अहैतुकी करुणा-कृपा भी सहयोग करती है । भगवन्नाम और मंत्र में यह फर्क है कि मंत्र जापक की मेहनत एवं श्रद्धा का फल लाता है तथा भगवन्नाम भगवान की कृपा से फल को सुहावना बनाता है । भगवन्नाम में भगवान की विशेष कृपा भी काम करती है ।

अगर भगवन्नाम गुरु के द्वारा गुरुमंत्र के रूप में मिलता है और उसे अर्थसहित जपते हैं तो वह सारे अनर्थों की निवृत्ति और परम पद की प्राप्ति कराने में समर्थ होता है । गुरु जब मंत्रदीक्षा देते हैं तो अपने परब्रह्म-परमात्म स्वरूप में एकाकार होते हैं । जैसे रामकृष्ण परमहंस ने नरेन्द्र को कहा : ''तुझे ईश्वर के प्रति रुचि है, ईश्वर को पाना ही है ?''

नरेन्द्र बोले : ''हाँ ।''

रामकृष्ण उन्हें कमरे में ले गये । बोले : ''कमीज उतार दो ।'' मंत्रदीक्षा देने के लिए कमीज उतरवाना कोई जरूरी नहीं है लेकिन नरेन्द्र दार्शनिक है, तार्किक है, इसमें श्रद्धा है कि नहीं देखना पड़ेगा । कमीज उतारी । रामकृष्णदेव ने परखा कि श्रद्धा है और ध्यानस्थ होकर देख लिया कि कौन-से केन्द्र में नरेन्द्र के मन और प्राण रहते हैं । वहाँ स्पर्श कर दिया और स्पर्शदीक्षा

ईश्वर में आप जितना खोओगे, ईश्वर के प्रति आप जितना समर्पित होओगे, ईश्वर आपके द्वारा उतने ही बढ़िया कार्य करवायेगा ।
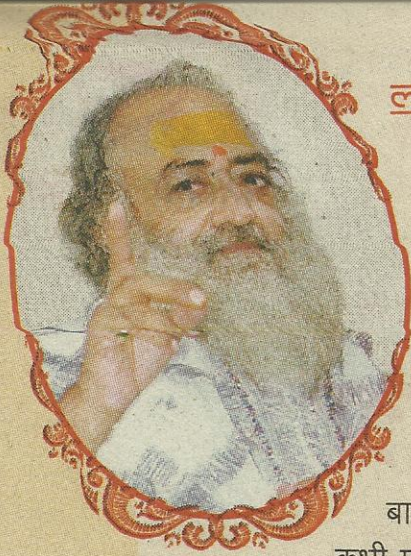
लवर-लवरी का प्रेम शरीर-प्रधान है । वह एक-दूसरे को खोखला
भक्त-भगवान का और संत-साधक

दे दी । कुछ ही समय में नरेन्द्र को अलौकिक अनुभूतियाँ होने लगीं । वे घबराये और सोचा कि 'इन पागल बाबा ने क्या कर दिया है ? कभी मुझे हँसी आती हैं, कभी रोना आता है, कभी क्रियाएँ होती हैं, कभी क्या-क्या होता है ! अब दुबारा दक्षिणेश्वर नहीं जाऊँगा ।' किंतु गुरु की स्पर्शदीक्षा का प्रभाव ऐसा कि न जाने का इरादा करनेवाले नरेन्द्र अपने को रोक नहीं पाये और स्वामी विवेकानंद बनने तक की यात्रा कर ली । यह ईश्वरकृपा-गुरुकृपा का सुमेल है ।

मरने के बाद भी तीन चीजें आपका पीछा नहीं छोड़तीं- पुण्य आपको स्वर्ग ले जाता है, पाप आपको नरक में ले जाता है और भगवन्नामयुक्त गुरुमंत्र जब तक भगवत्प्राप्ति नहीं हुई, तब तक मरने के बाद भी आपको यात्रा कराके भगवान तक ले जाता है । यह गुरुमंत्र की महिमा है । मंत्रदीक्षा ली व जापक ने कुछ वर्ष या कुछ महीने मंत्र जपा और फिर किसी पाप से, किसी कुसंग से उसकी श्रद्धा टूटी एवं उसने मंत्र छोड़ दिया तो **मंत्रत्यागात् दरिद्रता...** गुरुमंत्र का त्याग करने से दरिद्रता आती है ।

सद्गुरु में जब तक ईश्वरबुद्धि नहीं होती तब तक ब्रह्मविद्या फलदायक नहीं होती ।

दिल्ली की यह सच्ची बात है, घटित घटना है । एक सरदार आया । बोला : ''बाबाजी ! माफ कर दो, माफ कर दो ।''

मैंने कहा : ''क्या हुआ भैया ?''

''मैंने मंत्रदीक्षा ली मेरा धंधा चलने लगा । मैं लखपति हो गया । मकान हो गया, यह हो गया... फिर दोस्तों के, हरामियों के संग में आकर ऐसा-वैसा खाना-पीना किया, ऐसी-वैसी बातें कीं और मंत्र छोड़ दिया । फिर मुझे बड़ा घाटा हुआ और मेरा मकान बिक गया, यह हो गया, वह हो गया...''

तो क्या भगवान नाराज हो गये ? नहीं, मंत्र का यह प्रभाव है कि आप ज्यादा समय नीचे के केन्द्रों में न रहो, नीच कर्मों में न रहो, इसलिए बाहर की चीज में थोड़ा हेर-फेर करवा के ईश्वर ने आपको फिर से ऊपर उठने का अवसर दिया है । यह मंत्र-चेतना के चमत्कार की बात है !

देवाधीनं जगत्सर्वं मंत्राधीनश्च देवता ।

'समस्त जगत देव के अधीन है और देव मंत्र के अधीन है ।'

गुरुमंत्र को साधारण न समझें । प्रीतिपूर्वक, आदरपूर्वक, अर्थसहित नियमित जपते जायें । यह आपको परमात्मदेव में, परमात्मसुख में प्रतिष्ठित कर देगा ।

मंत्रसिद्धि की चार बातें

मंत्रसिद्धि की चार बातें जितने अंश में ठीक से पाली जायेंगी, ठीक से होंगी उतने ही अंश में उसका अलौकिक, चमत्कारिक लाभ महसूस होगा ।

एक तो है

शब्द-उच्चारण का ध्वनि-विज्ञान । इस विज्ञान की जानकारी शिष्य को नहीं हो तो गुरु को तो होनी ही चाहिए । सामनेवाला भावप्रधान है, श्रद्धाप्रधान है या विचारप्रधान है यह देखना पड़ता है । किसीकी रुचि है शिवजी में और उसको मंत्र थमा दें 'हरि ॐ', किसीकी रुचि है माताजी में और

बनाता है, एक-दूसरे का विनाश करता है, सत्यानाश करता है।
का प्रेम एक-दूसरे को पोषता है।

मंत्र थमा दें शिवजी का तो यह ध्वनि-विज्ञान के विपरीत है । जिस देव में शिष्य की श्रद्धा-प्रीति हो उनका मंत्र देने से उसको विशेष लाभ होगा ।

गुरुमंत्र-दीक्षा के समय मंत्र का अर्थ भी सामनेवाले को समझा देना चाहिए ।

दूसरी बात है :

संयम, प्राणशक्ति, मानसिक एकाग्रता । जैसे, अमावस्या, पूर्णिमा, एकादशी, पर्व आदि के दिनों में संसार-व्यवहार करने से ज्यादा हानि होती है । बाकी के दिनों में भी एक-दूसरे से शारीरिक सुखभोग करने का प्रयत्न करना यह असंयमी व्यक्ति की पहचान है ।

कोई पूछे : 'बाबाजी ! लवर-लवरी के प्यार में और भक्त-भगवान के प्यार में क्या फर्क है ?' लवर-लवरी का प्रेम शरीर-प्रधान है । वह एक-दूसरे को खोखला बनाता है, एक-दूसरे का विनाश करता है, सत्यानाश करता है । भक्त-भगवान का और संत-साधक का प्रेम एक-दूसरे को पोषता है । जो पोषता है वह परमात्म-प्रेम है और जो शोषता है वह लवर-लवरी का प्रेम है । संयम के साथ जितनी प्राणशक्ति, मानसिक एकाग्रता होगी, उतनी उपासना अथवा मंत्र सिद्धि जल्दी होगी ।

तीसरी बात है :

उपासना की सामग्री - तुम्हारा यह भौतिक शरीर जितना स्वस्थ होगा, उतनी उपासना में बरकत आयेगी ।

चौथी बात है :

भावना, श्रद्धा-विश्वास और आपका लक्ष्य-उद्देश्य जितना ऊँचा होगा, उतना ही नाम-कमाई से ऊँचा फल आयेगा । नाम तो भगवान का है लेकिन आप पुत्र को पास कराने के लिए जप रहे हैं तो फल छोटा आयेगा । यदि आप परमात्मप्राप्ति के उद्देश्य से भगवन्नाम-मंत्र जपते हैं तो ऊँचा फल आयेगा । दृढ़ता से लगे रहो तो अवश्य-अवश्य परमात्मप्राप्ति हो जायेगी । भगवद्-प्राप्ति के उद्देश्य से किये हुए जप दोषों को मिटाते हैं । जप से धारणा भी होने लगती है, ध्यान भी होने लगता है, समाधान भी होने लगता है । परमात्म-तत्त्व का ज्ञान भी सहज उपदेशमात्र से स्थित हो जाता है ।

गुरु सच्चिदानंदस्वरूप हैं। गुरु के वचन पर विश्वास होना चाहिए। यदि तुम गुरुवाक्य पर बालक की भाँति विश्वास करो तो तुम भगवान को पा जाओगे।
- श्री रामकृष्ण परमहंस

आयुर्वेद की एक प्राचीन पुस्तक 'कश्यप-संहिता' में कहा गया है कि मनुष्य पहले बोलकर दुःखी होता है । अतः रोगों से बचने के लिए पाँच बातों का ध्यान रखना चाहिए -

'सत्यं हितं मितं ब्रूयादभिसंवादि पेशलम् ।'

(१) सत्य (२) हितकर (३) सीमित (४) मतभेदरहित (५) कोमल वाणी बोलनी चाहिए ।

***

परमात्मा का कोण बदलना आपके हाथ में नहीं, अपने कैमरे का कोण बदलना आपके हाथ में है। उसे बदलिये ।

हे साधक !
रक्षा कर हृदयकोष की

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

व्यासपूर्णिमा के बाद आनेवाली पूर्णिमा 'राखी पूर्णिमा' के नाम से भी जानी जाती है। इसे 'रक्षाबंधन पर्व' भी कहा जाता है।

यूँ तो 'रक्षाबंधन' भाई-बहन का त्यौहार है। भाई-बहन के बीच प्रेमतंतु को निभाने के वचन देने का दिन है, अपने विकारों पर विजय पाने

का, विकारों पर प्रतिबंध लगाने का दिन है एवं बहन के लिए अपने भाई के द्वारा संरक्षण पाने का दिन है। लेकिन विशाल अर्थ में आज का दिन शुभ संकल्प करने का दिन है, परमात्मा के सान्निध्य का अनुभव करने का दिन है, ऋषियों को प्रणाम करने का दिन है । अंतरात्मा में, परमात्मा में प्रेम और निष्ठा का दिन है।

भाई हमारी लौकिक संपत्ति का रक्षण करते हैं किंतु संतजन व गुरुजन तो हमारे आध्यात्मिक संपदा का संरक्षण करते हैं।

उत्तम साधक बाह्य चमत्कारों से प्रभावित होकर नहीं अपितु अपने दिल की शांति और आनंद के अनुभव से ही गुरुओं को मानते हैं। साधक को जो आध्यात्मिक संस्कारों की संपदा मिली है, वह कहीं बिखर न जाय; काम, क्रोध, लोभ आदि लुटेरे कहीं उसे लूट न लें इसलिए साधक गुरुओं से रक्षा चाहता है। उस रक्षा की याद ताजा करने का दिन है – रक्षाबंधन पर्व।

करीब जाने पर जिस तरह समुद्र शीतलता प्रदान करता है, वैसे ही जिनकी कामनाएँ शांत हो गयी हैं, जिन्होंने परमात्मतत्त्व में विश्रांति पायी है ऐसे महापुरुषों के समीप जब हम जाते हैं तो हमें भी आध्यात्मिक आंदोलन व शीतलता मिलती है। जिन महापुरुषों ने शास्त्र बनाकर आध्यात्मिक शीतलता फैलायी उनका हम पर ऋण है। कहीं हम कृतघ्न न हो जायें इसलिए अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने का तथा अपने जीवन में आनेवाले विघ्नों से सुरक्षा पाने का यह दिन है, इसीलिए इसे 'सुरक्षा पूर्णिमा' भी कह सकते हैं।

गुरु-उपदिष्ट मार्ग पर अग्रसर होते किसी साधक को सगे-संबंधी, पुत्र-परिवार साधना के मार्ग में जाने से रोकते हैं तो कभी उसके शरीर की ना-दुरुस्त स्थिति उसे रोकती है। इसलिए मार्ग पर आगे बढ़ने में वह कभी सफल होता है तो कभी फिसलता है। तब साधक अपनी सुरक्षा के लिए प्रार्थना करता है :

दुनिया के हंगामों में आँख हमारी लग जाये,
उसके पहले ओ मेरे गुरुदेव !

यदि हम आत्मिक सुख चाहते हैं तो हमें हँसते-हँसते जीवन गुजारना होगा और इसके लिए आवश्यकता है स्वभाव को अनुकूल बनाने की ।

हे साधक ! अपने हृदयकोष की, मति की रक्षा कर।
शम, संतोष, शुचित्व अपने स्वभाव में भर दे।
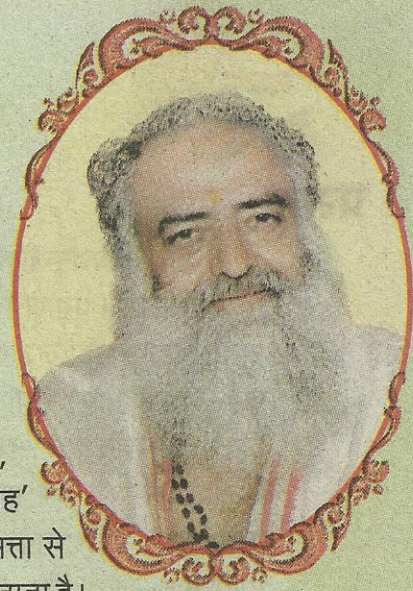
तुम मेरे ख्वाबों में आना प्यार भरा पैगाम लिये॥

अपनी साधना की रक्षा हो, आत्मसाक्षात्कार के मार्ग में आनेवाली विघ्न-बाधाओं से अपनी सुरक्षा हो ऐसे संकल्प रक्षाबंधन के दिन साधक करते हैं। रक्षाबंधन शब्द में 'र' का अर्थ है :

रक्षा कर अपने हृदयकोष की।

हे साधक ! अपने हृदयकोष की, मति की रक्षा कर। वह अविवेक के द्वारा मन की गुलाम न हो, इन्द्रियों की दास न हो और नीच योनियों में न ले जाय, इसलिए उसकी रक्षा कर। शम, संतोष, शुचित्व अपने स्वभाव में भर दे।

'क्ष' का अर्थ है :

क्षमा प्रेम उदारता, परदुःख का एहसास।
सार्थक जीवन है वही, रखे न कोई आस॥

हे साधक ! अपने जीवन में क्षमा, दया, प्रेम, उदारता, परदुःखकातरता जैसे दैवी गुणों को ला और स्वावलम्बी व पुरुषार्थी बन।

'ब' का अर्थ है :

बंधन मोक्ष से है परे, जन्म-कर्म से दूर।
व्यापक सर्व में रम रहा, वह नूरों का नूर॥

हे साधक ! आत्मा को न बंधन होता है, न मुक्ति होती है। 'मेरा चैतन्य आत्मा शुद्ध है' -ऐसा ख्याल रख और उस शुद्ध को पाने के लिए बंधनवाले कर्मों से बच तथा कर्मों में जो दोष हैं उन्हें निकाल दे तो तेरे कर्म नैष्कर्म्य सिद्धि ले आयेंगे।

'मेरा आत्मा, मेरा आत्मा...' तो अनेक आत्मा हो गये, नहीं। लाखों-लाखों घड़े रखो तो उनके जल में लाखों चाँद दिखेंगे। 'मेरा चाँद, मेरा चाँद...' तो कहोगे लेकिन है एक ही चाँद। ऐसे ही 'मेरा-मेरा' बोलने की गहराई में देखो तो लाख परमात्मा, करोड़ परमात्मा नहीं बल्कि एक है, अंतःकरण-अवच्छिन्न चेतन में वह एक-का-एक। सभीका वह आपा है। 'मैं, तू, यह, वह' होकर भासता है पर है वही-का-वही। जिसकी सत्ता से 'मैं' स्फुरित होता है, उसीकी सत्ता से 'यह' दिखता है, उसीकी सत्ता से 'तू' और 'वह' बोला जाता है।

'ध' का अर्थ है :

धर्म दया और दान संग,
जीवन में हो उमंग।
प्रभुप्रेम की प्यास हो,
लगे नाम को रंग॥

हे साधक ! तेरे जीवन में धर्म हो; दया, दान का गुण हो, उमंग हो, पिया परमात्मा को मिलने की तड़प हो। तेरे मन को सदैव उसके नाम-भजन-सुमिरन का चस्का लगा रहे।

'न' का अर्थ है :

नभ जल थल में है वही,
सर्व में हरि का वास।
नूरे नजर से देखते
वही दिव्य प्रकाश॥
लाली लहू में है वही,
कण-कण में है निवास।
खोज ले मन-मंदिर में उसे,
जो सदा है तेरे पास॥

खून में जो लाली है वह किसकी सत्ता से बनती है? तुम्हारी सब्जी-रोटी से लाली कौन बनाता है ? सर्वत्र उसी परमात्मा हरि की सत्ता है, हरि का वास है। हे साधक ! तू उसे अपने मन-मंदिर में खोज ले जो सदा तेरे पास है।

बाह्य प्रशंसा जीव को खोखला कर देगी और कष्ट व कठिनाइयाँ मालिक के निकट ले जायेंगी।

साधवो दीनवत्सलाः

संत तुकारामजी महाराज संतों-महापुरुषों के अवतार का प्रयोजन बताते हुए कहते हैं : 'हे संतो-महापुरुषो ! जड़ जीवों पर कृपा करनेवाले माई-बाप हैं आप। मैं पतित किस प्रकार आपकी कीर्ति का वर्णन कर सकता हूँ ? विषय-सुख लोलुपता में जड़ बने हुए लोगों का उद्धार करने तथा भक्तिभाव, धर्म, सदाचार, भगवन्नाम-जप और सच्चे सुख को बढ़ाने के लिए ही आपने अवतार धारण किया है। हे संतो ! जैसे चंदन में स्वयं को घिसकर औरों को सुगंध देने का गुण होता है, ऐसे ही आप भी जग में हो (अर्थात् आप स्वयं कष्ट सहकर भी दूसरों को सुख देते हो)।'

संत तुकारामजी के इन पावन वचनों के साक्षात् दर्शन संत तुलसीदासजी के जीवन के इस प्रसंग से कर सकते हैं :

काशी में रूप-लावण्य संपन्न एक प्रसिद्ध नृत्यांगना थी, जिसका नाम था वासंती। उस समय के राजा लोग भी उस पर मोहित थे। एक दिन उसे कहीं से 'रामचरितमानस' मिल गयी। वह बड़े प्रेम से नित्य उसे पढ़ने लगी। पढ़ते-पढ़ते तुलसीदासजी के प्रति उसकी श्रद्धा बढ़ती गयी और उन्हें वह अपना गुरु मानने लगी। उसके दिल में उनके दर्शन करने की उत्कंठा जागृत हुई।
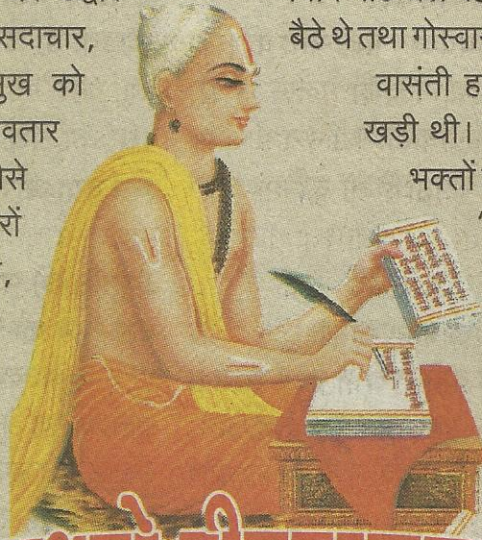
अपने भाग्य को श्रेष्ठ बनाना चाहते हो तो नित्यप्रति सत्संग का नियम बना लो ।

काशी में 'तुलसी चौराहा' है। वहाँ पर तुलसीदासजी की उपस्थिति में 'रामचरितमानस' का पाठ होता था और अंत में 'विनय पत्रिका' का पद गाया जाता था।

एक दिन साहस करके वह 'तुलसी चौराहे' पर गयी। पाठ चल रहा था, भक्त तन्मय होकर बैठे थे तथा गोस्वामीजी नेत्र मूँदकर बैठे थे।

वासंती हाथ जोड़कर एक कोने में खड़ी थी। पाठ खत्म हुआ तब कुछ भक्तों की नजर वासंती पर गयी :

''अरे, यह यहाँ क्यों खड़ी है ? ऐ पापिन ! चली जा यहाँ से...''

तुलसीदासजी की ओर अपलक निहारते हुए वासंती चुपचाप खड़ी रही। कोलाहल सुनकर तुलसीदासजी ने आँखें खोलीं, पूछा : ''बेटी ! तुम कौन हो और क्या चाहती हो ?''

वात्सल्यपूर्ण वचन सुनकर वासंती की आँखों से अश्रुधाराएँ बह चलीं। उसे ऐसा लगा मानो जीवनाधार मिल गया हो। वह बोली : ''बाबाजी ! भक्तों का मुझे दुत्कारना ठीक है। मैं एक वेश्या हूँ। मैंने अब आपको गुरु मान लिया है। मैं आपके सम्मुख विनय-पत्रिका का एक पद गाना चाहती हूँ।''

भक्त बोले : ''महाराज ! लगता है यह हमारा नाम खराब करने के इरादे से यहाँ आयी है। इसे सम्मति देना गलत होगा। आप हमें आज्ञा कीजिये, हम अभी इसे यहाँ से निकाल देते हैं।''

संतों को तलाश ही होती है निश्छल, निर्मल उर-आँगन की, जिसमें वे भगवद्-अमृत की वर्षा कर सकें। तुलसीदासजी को यहाँ ऐसा ही निर्मल हृदय मिला।

गोस्वामीजी ने भक्तों को समझाया : ''मैं भी कितना पतित था, फिर भी भगवान ने मुझे अपने दरबार से नहीं निकाला, अपनी शरण दी तो यह इस दरबार में बैठने के लिए अपात्र कैसे ?''

भगवान और भगवत्प्राप्त संतों की दृष्टि एक जैसी ही होती है। भगवान श्रीकृष्ण ने भी कहा है :

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥

'यदि कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्यभाव से मेरा भक्त होकर मुझको भजता है तो वह साधु ही मानने योग्य है, क्योंकि वह यथार्थ निश्चयवाला है अर्थात् उसने भलीभाँति निश्चय कर लिया है कि परमेश्वर के भजन के समान अन्य कुछ भी नहीं है।' **(गीता : ९.३०)**

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।

'वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और सदा रहनेवाली परम शांति को प्राप्त होता है।' **(९.३१)**

भगवत्प्राप्त संतों का सत्संग-दरबार सबके लिए होता है। वहाँ कोई भेदभाव नहीं होता। वह होता ही है पतितों का उद्धार करने के लिए।

तुलसीदासजी की अनुमति पाकर वासंती ने गाया :

श्रीरामचंद्र कृपालु भजु मन
हरण भवभय दारुणम्।
नवकंज-लोचन, कंज-मुख,
कर-कंज पद कंजारुणम्॥
सिर मुकुट कुंडल तिलक
चारु उदारु अंग विभूषणम्।
आजानुभुज शर-चाप-धर,
संग्राम-जित-खरदूषणम्॥
(विनय पत्रिका : ४५.१,४)

'रामचरितमानस' का सच्चे हृदय से पठन-मनन करने से वासंती का हृदय निर्मल हो गया था। उसकी आवाज अब किसी व्यावसायिक गायिका की आवाज नहीं थी, बल्कि उसमें मीरा की नाईं भक्तिभाव की रसधारा का प्राकट्य हो गया था। संतों को तलाश ही होती है निश्छल, निर्मल उर-आँगन की, जिसमें वे भगवद्-अमृत की वर्षा कर सकें। तुलसीदासजी को यहाँ ऐसा ही निर्मल हृदय मिला और उन्होंने उस पर संकल्प से अपनी कृपा बरसायी। अब बाहर से तो वासंती का शरीर वैसा ही दिख रहा था, लेकिन अंदर से वासंती, वासंती वेश्या नहीं बची थी।

गोस्वामीजी ने उससे कहा :

''बेटी ! जब चाहो, पाठ-कीर्तन-सत्संग में आते रहना।''

वासंती अपनी कोठी पर गयी । बीते हुए जीवन में किये पापों को याद कर खूब रोयी। उसका वैराग्य जग गया। कोठी बेचकर उसने कुछ रुपये अपने सेवक-साथियों में बाँट दिये व बचे हुए रुपये लेकर अयोध्या पहुँची। सरयू नदी में स्नान किया। सरयूजी के घाट से मंदिरों की ओर जाने के रास्ते में ही वासंती ने दो मंजिला मकान खरीदा और साधु-संतों के लिए

याद रखो कि असफलता गिरने में नहीं बल्कि गिरकर हार मान लेने में है । अतः उठो और आगे बढ़ो ।

अन्नक्षेत्र शुरू किया। उसके मन में बार-बार यह भाव उठता कि 'मेरे सद्गुरु तुलसीदासजी एक बार तो यहाँ पधारें, मेरे घर की रोटी खायें।'

वह दिन भर भजन-कीर्तन करती व जैसे शबरी रामजी की प्रतीक्षा में बैठी रहती थी, वैसे अपने गुरु की प्रतीक्षा में, स्मरण में तन्मय रहने लगी।

इधर गोस्वामीजी की आँखें रोज वासंती को खोज रही थीं। एक दिन उन्हें पता चला कि वासंती कोठी बेचकर कहीं चली गयी है। 'उसे प्रभु-प्रेम का रंग लग गया था, इसलिए वह अयोध्या ही गयी होगी।' - ऐसा सोचकर वे भी अयोध्या गये। एक दिन सरयू-स्नान के बाद लौटते समय उनके कानों में सुनायी पड़ा :

श्रीरामचंद्र
कृपालु भजु मन
हरण भवभय दारुणम्।...

तुलसीदासजी के पैर रुक गये। आवाज की दिशा में चलते-चलते वे एक घर की ऊपरी मंजिल पर पहुँचे तो देखा कि वासंती तन्मय हो के गा रही है :

इति वदति तुलसीदास शंकर
शेष-मुनि-मन-रंजनम्।
मम हृदय कंज निवास करु,
कामादि खल-दल-गंजनम्॥
(विनय पत्रिका : ४५.५)

गुरु को जितना-जितना प्रेम करते जाओगे, उतना-उतना गुरु का 'मैं' आपका 'मैं' होता जायेगा।

पद पूरा हुआ। गोस्वामीजी बोले : ''बेटी !...''

वासंती की आँखें खुलीं : ''बाबा !...''

''हाँ बेटी ! मैं कितने दिनों से तुझे खोज रहा हूँ।''

वासंती की आँखों से अश्रुधाराएँ थमने का नाम नहीं ले रही थीं। वह मूर्ति की तरह स्थिर होकर निर्निमेष गुरुजी को निहार रही थी।

''बेटी ! अब क्या चाहती हो ?''

''बाबा ! आपने मुझे भगवत्प्रीति के रास्ते लगाकर सब कुछ दे डाला है। अब संसार की कोई वस्तु मुझे नहीं चाहिए। बस, एक भाव मेरे हृदय में बार-बार उठ रहा था कि आप यहाँ पधारें और मेरे घर की रोटी खायें, सो भी पूरा करने आप पधार गये हैं।''

प्रभु की प्रेमाभक्ति का जो बीज तुलसीदासजी ने वासंती को दिया था, उसे वासंती की लगन ने इतना विकसित किया कि तुलसीदासजी ने खुद वासंती की खोज की, उसे दर्शन देकर कृपा-वर्षा की तथा उसकी रोटी का सेवन कर उसे पूर्ण निष्कामता की ओर अग्रसर किया।

तुलसीदासजी जैसे सत्पुरुषों के लिए भागवत (११.२.६) में आता है :

साधवो दीनवत्सलाः। अर्थात्

सत्पुरुष दीनवत्सल होते हैं। सद्गुरु की करुणा-कृपा जब समाज द्वारा तिरस्कृत पतित-से-पतित व्यक्ति का भी उद्धार कर सकती है तो सामान्य जनों के उद्धार में क्या संशय है ? जरूरत है तो बस सत्पुरुषों के प्रति अपनत्व का दृढ़ भाव जगाने की।

दुश्चरित्र, दुर्भाव, दुर्गुण और दुःसंग छोड़कर भगवान की ओर जाना पड़ता है।

महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

(अंक १६० से आगे)

भगवान के अंतर्धान हो जाने पर ब्रह्मादि देवतागण भी अपने-अपने स्थान को चले गये और सुरराज इन्द्र तथा सब-के-सब दिक्पाल प्रह्लाद के प्रति स्नेहमयी कृतज्ञता प्रकट करते हुए अपने-अपने पदों पर जा विराजे । इधर ये लोग अपने-अपने स्थानों को गये और उधर महर्षि शुक्राचार्य तथा अन्यान्य ऋषि, मुनि गण और प्रह्लादजी के दोनों गुरु शण्ड एवं अमर्क भी दैत्यराज का वध सुनकर वहाँ जा पहुँचे । दैत्यराज के अग्नि संस्कार की तैयारी होने लगी और विधवा राजमाता कयाधू अपने प्राणपति के वियोग में व्याकुल हो पति के शव के साथ सती होने को तैयार हुई । उस समय मातृभक्त प्रह्लाद की दशा बड़ी ही शोचनीय थी । प्रह्लादजी ज्ञानी थे, विद्वान थे, संसार को असार समझते थे और जीवन्मुक्त थे, किंतु माता की स्नेहमयी मूर्ति को विलाप करते देख, वे बहुत ही दुःखी थे । लौकिक रूप में वे समझते थे कि माता के वैधव्य का कारण मेरा ही शरीर है । अतएव वे लज्जित थे और माता के सामने जाने का साहस नहीं कर पा रहे थे ।

शुक्राचार्यजी ने उनके आंतरिक भावों को भलीभाँति समझकर विधवा राजमाता कयाधू को समझाया : ''बेटी ! शोक मत कर, भावी बड़ी प्रबल होती है । जो अनिवार्य था, वह हो गया । तेरे ये पुत्र तुझको दुःखित देख दुःखी हो रहे हैं और तेरा प्राण प्रह्लाद तो अत्यंत ही व्याकुल है । तू सावधान हो और अपने पतिदेव का अग्नि संस्कार कराने के लिए पुत्रों को उत्साहित कर । इस समय तेरा सती होना उचित नहीं। तू राजमाता है और आज प्रह्लाद का समावर्तन-संस्कार ऐसे अवसर पर हो रहा है कि जो संस्कार के रूप में नहीं, एक आपत्तिधर्म रूप में है । उसके विवाह के पहले तेरा संसार से विदा होना उसके गार्हस्थ्य धर्म में बड़ा बाधक होगा । अवश्य ही तू अपने प्राणपति की अनन्य भक्ता है, अतः पतिदेव की अनुगामिनी बनना तेरे लिए स्वाभाविक ही है । किंतु तू जैसी पतिव्रता है वैसे ही पुत्रवत्सला भी तो है । यह सनातन प्रथा है कि पुत्रवत्सला माताएँ **'आत्मा वै जायते पुत्रः'** को मानकर पतिदेव का चिंतन करतीं हुई जीवित रहकर अपना पवित्र जीवन ब्रह्मचर्य से बिताती हैं । इस समय धैर्य धारण करके तू शोक को दूर कर और अपने प्राणप्रिय पुत्र प्रह्लाद की ओर देख । उसको दुःखी छोड़ तुझको सती होना उचित नहीं है ।''

राजमाता कयाधू : ''भगवन् ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है किंतु क्या करूँ ? व्याकुल हृदय नहीं मानता । चित्त यही चाहता है कि जिन प्राणपति के आज्ञानुसार मैं सदा रहती थी, जो प्राणपति मुझे अपनी हृदयेश्वरी मानते थे, आज वे अपने राजपाट, सारे परिजन एवं पुरजन छोड़, अकेले सुदूर यात्रा को जा रहे हैं, नियमानुसार उनकी सेवा के लिए मैं ही उनकी अनुगामिनी हो सकती हूँ, फिर भी मैं यदि उनको छोड़ संसार के बंधन में पड़ी रहूँगी तो मेरा कर्तव्य पूरा न होगा और मैं सती कैसे कहलाऊँगी ?

आचार्यप्रवर ! आप मुझे आज्ञा दें कि मैं प्राणप्रिय पुत्र प्रह्लाद का स्नेह हृदय में रखती हुई अपने स्वामी की सहगामिनी बनने के लिए सती हो जाऊँ । प्रह्लाद को आप समझा दें । वह शोक न करे ।''

(क्रमशः)

एक चैतन्य ही अनंत रूपों में लीला कर रहा है । फिर किससे राग और किससे द्वेष ?

कर्मयोगी

लोकमान्य तिलक

''स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है'' – स्वातंत्र्य के इस महान घोषवाक्य का नाद करनेवाले लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का जन्म एक प्राथमिक शिक्षक श्री गंगाधर राव के घर २३ जुलाई १८५६ को रत्नागिरी (महा.) में हुआ था । उनका जन्म-नाम केशव था और बचपन में उन्हें बलवंत या बाल के नाम से भी पुकारते थे । बाल को पिता से विद्या व प्रतिभा तथा माता से धार्मिक संस्कार मिले । उनकी 'श्रीमद्भगवद्गीता' पर अत्यंत निष्ठा थी । आगे के जीवन में जब उन्हें मांडले जेल में रहना पड़ा, तब उन्होंने गीता पर 'गीता-रहस्य' नामक जो टीका लिखी, वह निष्काम कर्मयोग की प्रेरणा देनेवाली एक अनुपम कृति के रूप में विश्वप्रसिद्ध है ।

दैव का उपकार मुझे नहीं चाहिए

एक बार लोकमान्य तिलक महाराष्ट्र के तलेगाँव में आयोजित एक समारोह में भाग लेने गये थे । भाषण समाप्त होने के बाद विविध विषयों पर परस्पर चर्चा होने लगी । बात-बात में काफी समय बीत गया । अचानक तिलकजी की नजर घड़ी पर गयी । रेलगाड़ी छूटने का समय होने को था । तभी एक विद्वान ने कहा : ''महोदय ! आप निश्चिंत रहें । इस गाड़ी का समय जैसा कुछ है ही नहीं ।''

दूसरे विद्वान ने समर्थन दिया : ''हाँ तिलकजी ! गाड़ी हमेशा ही देर से आती है । मैं पूरे विश्वास के साथ कहता हूँ कि आज भी यह देर से ही आयेगी । कृपया आप अपनी चर्चा चालू रखें ।''

उनकी बात सुनकर तिलकजी गंभीर हो गये । बोले : ''मैं तो पुरुषार्थ में विश्वास करता हूँ । रोज गाड़ी देर से आती है, आज भी आयेगी – ऐसी निरर्थक बातों में मैं नहीं मानता । दैव पर विश्वास रखके हाथ जोड़कर मैं कभी बैठा नहीं रह सकता ।''

तिलकजी ने अपना थैला कंधे पर टाँगा और बोले : ''गाड़ी देर से आये या उचित समय पर, मैं तो प्रयत्नपूर्वक सही समय पर जाकर स्टेशन पर बैठूँगा । दैव का उपकार मुझे नहीं चाहिए ।''

सभीको उस दिन एक नयी सीख मिल गयी कि जो भाग अपने कर्तव्य या पुरुषार्थ का है, उसमें हमें लापरवाही नहीं करनी चाहिए । उसमें निष्क्रियता दिखाना भाग्य के भरोसे रहना है । कर्तव्य-पालन में तत्पर रहनेवाले ही ऊँचे काम कर सकते हैं ।

"मैं तो पुरुषार्थ में विश्वास करता हूँ । रोज गाड़ी देर से आती है, आज भी आयेगी - ऐसी निरर्थक बातों में मैं नहीं मानता । दैव पर विश्वास रखके हाथ जोड़कर मैं कभी बैठा नहीं रह सकता ।"

कर्तव्य-यज्ञ की बलिवेदी पर...

भारत में प्लेग फैला था । जनता इस भयंकर महामारी से त्रस्त थी। इसकी चपेट में आकर तिलकजी के दो युवा पुत्र असमय ही काल का ग्रास हो चुके थे, पर धैर्यशाली तिलकजी ने अपने जन-जागृति के कार्य में तनिक भी व्यवधान न आने दिया।

तिलकजी 'केसरी' नामक समाचार पत्र निकालते थे। उसके माध्यम से वे जनता में स्वाधीनता के प्रति नया उत्साह पैदा करते थे। प्लेग की महामारी के कारण कम्पोजीटरों की संख्या एकदम नहींवत् हो गयी। कम्पोजीटरों के बिना केसरी का निकलना असंभव-सा था । प्रेस मालिक तिलकजी के पास आया और बोला : "तिलकजी ! कम्पोजीटर ही नहीं हैं फिर केसरी किस प्रकार समय पर निकाला जा सकेगा ?"

प्रेस मालिक की यह बात सुनकर तिलकजी एकदम उछल पड़े, मानो अनजाने में अंगारों पर पैर पड़ गया हो। वे अपने युवा पुत्रों की मृत्यु का समाचार सुनकर भी स्वस्थ रह सकते थे, पर 'केसरी' के लिए ऐसा सुनना उनके लिए असहनीय था।

तिलकजी ने गर्जना करते हुए कहा : "केसरी किसी भी परिस्थिति में सही समय पर ही निकलना चाहिए, फिर तुम चाहे जो करो।"

प्रेस मालिक थके स्वर में बोला : "तिलकजी ! मैं इसमें कुछ कर सकूँ ऐसी मेरी स्थिति नहीं है। कम्पोजीटरों के बिना यह काम आगे कैसे चल सकेगा ?"

तिलकजी उठ खड़े हुए व बोले : "देखो, तुम 'आर्यभूषण प्रेस के मालिक' और मैं 'केसरी का संपादक' - हम दोनों मर जायें तो भी 'केसरी' का मंगलवार का अंक तो मंगलवार को ही निकलना चाहिए।"

इतना कहकर तिलकजी निकल पड़े। शारीरिक अस्वस्थता के बावजूद वे शहर की दूसरी प्रेसों में घूमते रहे और अंत में येन-केन प्रकारेण समझा-बुझाकर कम्पोजीटरों को ले आये । मंगलवार की प्रभात को 'केसरी' लोगों के हाथ में था। कैसी कर्तव्यपरायणता ! जनता-जनार्दन के प्रति कैसा दिव्य सेवाभाव ! तभी तो देश उन्हें 'लोकमान्य तिलक' के नाम से आज भी याद करता है।

जहाँ विचार नहीं, वहाँ कार्य नहीं । अतः मस्तिष्क को उच्च विचारों से, उच्च आदर्शों से भर दो । उन्हें दिन-रात अपने सामने रखो और तब उनमें से महान कार्य सम्पन्न होगा ।

हम बोलना चाहते हैं तभी शब्दोच्चारण होता है, बोलना न चाहें तो नहीं होता । हम देखना चाहें तभी बाहर का दृश्य दिखता है, नेत्र बन्द कर लें तो नहीं दिखता । हम जानना चाहें तभी पदार्थ का ज्ञान होता है, जानना न चाहें तो ज्ञान नहीं होता। अतः जो कोई पदार्थ देखने, सुनने या जानने में आता है उसको बाधित करके बाधित करनेवाली ज्ञानरूप बुद्धि की वृत्ति को भी बाधित कर दो । उसके बाद जो शेष रहे वह ज्ञाता है । ज्ञातृत्व धर्मरहित शुद्धस्वरूप ज्ञाता ही नित्य सच्चिदानन्द ब्रह्म है । निरन्तर ऐसा विवेक करते हुए ज्ञान व ज्ञेयरहित केवल चिन्मय, नित्य, विज्ञानानन्दघनरूप में स्थिर रहो । *- आश्रम की पुस्तक 'जीवन रसायन' से*

साधना प्रकाश

भगवत्प्राप्ति के विविध उपाय

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

(गतांक का शेष)

शरीर की विश्रांति तो सदियों से ले-लेकर मर रहे हैं, अब भगवान की प्रीति में, परमात्मा की विश्रांति में आ जाओ तो कार्य में भी मदद मिलेगी और भगवत्प्राप्ति में भी सहायता मिलेगी ।

संयम : इन्द्रियों का संयम रखें । ईश्वरप्राप्ति के लिए संयम अति आवश्यक है । मन-इन्द्रियाँ स्वाधीन अर्थात् अपने अधीन रहें ।

उत्साह : ईश्वरप्राप्ति के लिए सदा उत्साहित रहें । व्यवहार में भी अपनेको निराश, हतोत्साहित न होने दें । कुछ भी असंभव नहीं है, ऐसा उत्साह सदा बनाये रखें । उतार-चढ़ाव के दिन आते-जाते रहते हैं और आप नित्य ईश्वर के पुत्र हैं । हौसला बुलंद रखें ।

ईमानदारी की ईश्वरप्राप्ति की तड़प हमें न चाहते हुए भी श्रेष्ठ ऊँचाइयों पर रखती है ।

तत्परता : कोई भी काम अपने अधिकार, योग्यता, रुचि व धर्म की अनुकूलता देखकर फिर तत्परता से करें । लापरवाही से कोई भी कार्य बिगड़ने न दें । प्रत्येक कार्य तत्परता व सावधानी से करें ।

नियत समय व कार्यकुशलता : प्रत्येक कार्य समय-अनुरूप करें । जैसे, रात्रि को भोजन करना ही है तो आठ बजे तक कर लें । ऐसा नहीं कि दस बजे खायेंगे तो चलेगा । नहीं, कोलेस्ट्रॉल बढ़ जायेगा, हृदय व यकृत की तकलीफें आने लगेंगी । देर रात को भोजन करना बुढ़ापे को बुलाना है । अभी तो कोई दिक्कत नहीं है लेकिन वह भोजन कुछ समय के बाद दिक्कत लायेगा । केवल भोजन ही नहीं, कोई भी काम उचित समय पर कर लेना चाहिए । साथ ही कार्यकुशलता भी आवश्यक है । जो काम करें, उसमें पूरा तल्लीन हो जायें तो कार्य करने में रस आने लगेगा ।

दुर्लभता अथवा कठिनता का त्याग : जैसे पैर में काँटा चुभता है तो उखाड़कर फेंक देते हैं, ऐसे ही 'ईश्वरप्राप्ति कठिन है' - यह काँटा अपने हृदय से उखाड़कर फेंक दें । 'ईश्वरप्राप्ति मुझे होगी ही । ईश्वरप्राप्ति के लिए ही मनुष्य-जन्म मिला है ।'- ऐसा सोचें । जो पाने के लिए जन्म मिला है वह काम कठिन है तो सरल कौन-सा काम है ? इतना तो सामान्य सरकारी अधिकारी भी जानते हैं कि प्राचार्य की कुर्सी पर गड़रिया नहीं बिठाया जाता । थोड़ा-बहुत भले उन्नीस-बीस हो लेकिन अधिकारी को ही प्राचार्य की नौकरी मिलती है । अँगूठा छाप या तीसरी, पाँचवीं कक्षा पढ़े हुए को प्राचार्य नहीं बना सकते, योग्य व्यक्ति को ही योग्य जगह मिलती है । ऐसे ही ईश्वरप्राप्ति की योग्यता ईश्वर ने दी है तभी मनुष्य-शरीर (ईश्वरप्राप्ति का साधन) मिला है । जैसे प्राचार्य के पद पर आकर कोई बोले कि 'मैं प्राचार्य नहीं बन सकता हूँ' तो वह पागल है, ऐसे ही मनुष्य-शरीर मिलने के बाद भी 'मैं भगवान को नहीं पा

वास्तव में ईश्वरप्राप्ति के लिए किन्हीं लम्बे-चौड़े नियमों की जरूरत नहीं है। किसी विशिष्ट काल या कालांतर में प्राप्ति होगी ऐसा नहीं है। जरूरी है साधक के हृदय में उसकी प्राप्ति की तीव्र छटपटाहट।

सकता हूँ' ऐसा सोचनेवाला उससे भी ज्यादा पागल है।

प्राचार्य पद पर नियुक्ति हो गयी हो और बोले : ''मैं तो प्राचार्य नहीं हो सकता, मैं तो गड़रिया हूँ।''

''तूने B.A. B.Ed. कर लिया है?''

''किया है किंतु मैं तो गड़रिया जाति का हूँ।''

''अरे बेटे! फिर भी प्राचार्य है तू।''

ऐसे ही मनुष्य-शरीर मिला, माना मुक्ति का अधिकारी है तू। ईश्वरप्राप्ति सहज है यह पक्का कर ले। यह साधना में बड़ी मदद देगा।

निर्भयता : प्रतिकूलता से भय मत करो। सदा शांत और निर्भय रहो। सारी शक्ति निर्भयता से प्राप्त होती है। निर्भयता से सदा उत्साह बना रहता है।

परमात्मा विषयक ज्ञान : ईश्वरप्राप्ति के लिए बुद्धि में भगवद्ज्ञान की जरूरत है। सत् के ज्ञान से, सत् के विचार से सत्स्वरूप की प्राप्ति हो जाती है। भगवद्ज्ञान के लिए प्रीतिपूर्वक भगवत्साधन करें। जैसे मछली पानी के बिना नहीं रहती, चातक अपने लक्ष्य के बिना नहीं रहता तो साधक अपने परम लक्ष्य को पाये बिना क्यों रह जाय?

चातक, मीन, पतंग जब
पिया बिन नहीं रह पाय।
साध्य को पाये बिना,
साधक क्यों रह जाय?

इसलिए परमात्मा के ज्ञान को पाने के लिए अपने अंदर ललक बनाये रखें।

सूक्ष्म बुद्धि : ध्यान, सत्संग और सत्कर्म के द्वारा बुद्धि को सूक्ष्म करें। जैसे सूई सूक्ष्म होती है तो कपड़ों को जोड़ देती है, ऐसे ही बुद्धि सूक्ष्म होगी तो जीव-ब्रह्म की एकता के ज्ञान में प्रवेश करेगी।

शयन के पूर्व भगवद्-चिंतन : रात्रि को सोते समय भगवान का ध्यान-भजन, सुमिरन करके, भगवद्-चिंतन करते-करते सोना चाहिए। गीता-पाठ या श्री विष्णुसहस्रनाम का पाठ करके सोने से लाभ होता है।

साधन का त्याग नहीं : अपने जप-तप, नियम, सेवा, सत्कर्म आदि का त्याग न करें।

साक्षी बनें : मन में काम आये या क्रोध आदि आये तो आप उससे जुड़ो मत, उसके साक्षी बन जाओ।

सावधानी रखें : मन गिरानेवाली बातें करता है (विषय-भोगों में जाता है) तो उसी समय पानी का घूँट भर लो, कोई अच्छा शास्त्र पढ़ लो, खड़े होकर थोड़ा कूद लो, जोर-जोर से भगवान के नाम का जप करो। समझो मलाई से भरा थाल अथवा दूध का पतीला पड़ा है और कौआ, कुत्ता आता है तो आप क्या करते हैं? ऐसे ही विकार आकर सुखद अंतःकरण को कौए, कुत्ते की नाईं बिगाड़ने लगें तो उसी समय भगवन्नाम-जप चालू कर दो।

वास्तव में ईश्वरप्राप्ति के लिए
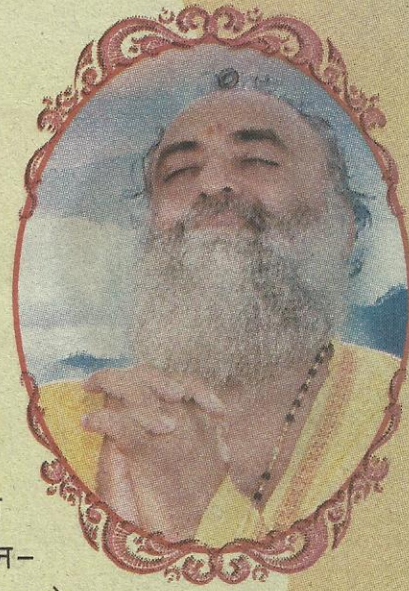
जो अपने न चाहने पर भी आपकी परम आवश्यकता की पूर्ति कर दे और आपके चाहने पर भी अनावश्यक को आपसे दूर कर दे, वह आपका परम हितैषी है।

किन्हीं लम्बे-चौड़े नियमों की जरूरत नहीं है । किसी विशिष्ट काल या कालांतर में प्राप्ति होगी ऐसा नहीं है । जरूरी है साधक के हृदय में उसकी प्राप्ति की तीव्र छटपटाहट । ईश्वर के सिवाय और कुछ सार न दिखे, उसको पाने के लिए तीव्र लगन हो, बस... उसकी प्राप्ति सहज हो जायेगी । किसीको प्रधानमंत्री बनने की तड़प हो तो तड़पमात्र से प्रधानमंत्री नहीं बन सकता लेकिन तड़प तीव्र हो तो ईश्वरप्राप्ति हो सकती है । ईश्वरप्राप्ति की तड़प बढ़ा दो तो बाकी सब दोष निकलते जायेंगे ।

जितना हेत हराम से,
उतना हरि से होय ।
कहे कबीर वा दास को,
पला न पकड़े कोय ॥

ईश्वरप्राप्ति की भूख लगेगी तो विवेक बढ़ेगा, वैराग्य बढ़ेगा, सत्त्वगुण की वृद्धि होगी तथा धीरे-धीरे सारे सद्गुण आयेंगे । धीरे-धीरे सब उपाय अपने-आप आचरण में आ जायेंगे और शीघ्र परमात्मप्राप्ति हो जायेगी ।

दुःखों से, चिंताओं से और जन्म-मरण की पीड़ाओं से मुक्ति का नाम है ईश्वरप्राप्ति । कौन चाहता है दुःख, पीड़ा, मुसीबत ! अगर नहीं चाहते तो फिर जहाँ इनकी पहुँच नहीं है उस परमात्मा में प्रीतिपूर्वक लगो ।

चाहे सुखद परिस्थिति हो या दुःखद, अपने कर्तव्य में डटे रहो ।

सोमवती अमावस्या

(२४ जुलाई २००६)

सोमवती अमावस्या का पर्व विशेषकर महिलाएँ मनाती हैं । इस पर्व में स्नान-दान का बड़ा महत्त्व है। इस दिन मौन रहकर स्नान करने से हजार गौ-दान का फल होता है । इस दिन पीपल और भगवान विष्णु का पूजन तथा उनकी १०८ प्रदक्षिणा करने का विधान है। प्रदक्षिणा करने से पूर्व निम्न प्रार्थना की जाती है :

मूलतो ब्रह्मरूपाय
मध्यतो विष्णुरूपिणौ ।
अग्रते शिवरूपाय
वृक्षराजाय ते नमः ॥
यं दृष्ट्वा मुच्यते रोगं
स्पर्शेपापं प्रमुच्यते ।
यदाश्रितं हि चिरंजीवी
त्वमऽश्वत्थां नमाम्यहम् ॥

'हे वृक्षराज ! आप जड़ से ब्रह्मा, मध्य से विष्णु और मस्तक से शिव स्वरूप हो। आपको मेरा नमस्कार है । आप मेरे द्वारा की हुई पूजा को स्वीकार करें और मेरे पापों का हरण करें।

जिसे देखने से रोग नष्ट होते हैं व स्पर्शमात्र से पाप तथा जिसके आश्रय में आ जानेमात्र से व्यक्ति चिरंजीवी हो जाता है, ऐसे पीपल को मेरा नमस्कार है।'

१०८ में से ८ प्रदक्षिणा कच्चा सूत पीपल के वृक्ष को लपेटते हुए की जाती है। प्रदक्षिणा करते समय १०८ फल पृथक् रखे जाते हैं। बाद में वे ब्राह्मणों या ब्राह्मणियों में वितरित कर दिये जाते हैं। ऐसा करने से संतान चिरंजीवी होती है।

नौ योगीश्वरों की कथा

(गतांक से आगे)

उनका चित्त शांत हो, व्यवहार के प्रपंच में विशेष प्रवृत्त न हो । **जिज्ञासु को चाहिए कि गुरु को ही अपना परम प्रियतम आत्मा और इष्टदेव माने । उनकी निष्कपट भाव से सेवा करे और उनके पास रहकर भागवतधर्म की – भगवान को प्राप्त करानेवाले भक्तिभाव के साधनों की क्रियात्मक शिक्षा ग्रहण करे ।** इन्हीं साधनों से सर्वात्मा एवं भक्त को अपने आत्मा का दान करनेवाले भगवान प्रसन्न होते हैं । पहले शरीर, संतान आदि में मन की अनासक्ति सीखे । फिर भगवान के भक्तों से कैसा प्रेम करना चाहिए यह सीखे । इसके पश्चात् प्राणियों के प्रति यथायोग्य दया, मैत्री और विनय की निष्कपट भाव से शिक्षा ग्रहण करे । मिट्टी, जल आदि से बाह्य शरीर की पवित्रता, छल-कपट आदि के त्याग से भीतर की पवित्रता, अपने धर्म का अनुष्ठान, सहनशक्ति, मौन, स्वाध्याय, सरलता, ब्रह्मचर्य, अहिंसा तथा शीत-उष्ण, सुख-दुःख आदि द्वंद्वों में हर्ष-विषाद से रहित होना सीखे । सर्वत्र अर्थात् समस्त देश, काल और वस्तुओं में चेतनरूप से आत्मा तथा नियंतारूप से ईश्वर को देखना, एकांत-सेवन, 'यही मेरा घर है' – ऐसा भाव न रखना, गृहस्थ हो तो पवित्र वस्त्र पहनना और त्यागी हो तो फटे-पुराने पवित्र चिथड़े, जो कुछ प्रारब्ध के अनुसार मिल जाय, उसीमें संतोष करना सीखे । भगवान की प्राप्ति का मार्ग बतलानेवाले शास्त्रों में श्रद्धा और दूसरे किसी भी शास्त्र की निंदा न करना, प्राणायाम के द्वारा मन का, मौन के द्वारा वाणी का और वासनाहीनता के अभ्यास से कर्मों का संयम करना, सत्य बोलना, इन्द्रियों को अपने-अपने गोलकों में स्थिर रखना और मन को कहीं बाहर न जाने देना सीखे । राजन् ! भगवान की लीलाएँ अद्भुत हैं । उनके जन्म, कर्म और गुण दिव्य हैं । उन्हींका श्रवण, कीर्तन और ध्यान करना तथा शरीर से जितनी भी चेष्टाएँ हों, सब भगवान के लिए करना सीखे । यज्ञ, दान, तप अथवा जप, सदाचार का पालन और स्त्री, पुत्र, घर, अपना जीवन, प्राण तथा जो कुछ अपनेको प्रिय लगता हो – सब-का-सब भगवान के चरणों में निवेदन करना, उन्हें सौंप देना सीखे । जिन संतपुरुषों ने सच्चिदानंदस्वरूप भगवान श्रीकृष्ण का अपने आत्मा और स्वामी के रूप में साक्षात्कार कर लिया हो, उनसे प्रेम और स्थावर, जंगम दोनों प्रकार के प्राणियों की सेवा, विशेष करके मनुष्यों की, मनुष्यों में भी परोपकारी सज्जनों की और उनमें भी भगवत्प्रेमी संतों की करना सीखे । भगवान के परम पावन यश के संबंध में ही एक-दूसरे से बातचीत करना और इस प्रकार के साधकों का इकट्ठे होकर आपस में प्रेम करना, आपस में संतुष्ट रहना और प्रपंच से निवृत्त होकर आपस में ही आध्यात्मिक शांति का अनुभव करना सीखे । राजन् ! श्रीकृष्ण राशि-राशि पापों को एक क्षण में भस्म कर देते हैं । सब उन्हींका स्मरण करें और एक-दूसरे को स्मरण करावें । इस प्रकार साधन-भक्ति का अनुष्ठान करते-करते प्रेम-भक्ति का उदय हो जाता है और वे (साधक) प्रेमोद्रेक से पुलकित शरीर धारण करते हैं । उनके हृदय की बड़ी विलक्षण स्थिति होती है । **(क्रमशः)**

सेवक को मान हो तो सदैव यही हो कि 'मेरे सद्गुरु पूर्ण हैं, मुझे तीनों लोकों में भय नहीं है ।' तो संसार की कोई भी हस्ती उसे भयभीत नहीं कर सकती ।

कोई छोटा-सा वचन, बदल देता है जीवन !

सिकंदर नरसंहार करता हुआ कुछ विशेष बनने की आशा लिये ईरान पहुँचा। ईरान के राजा भी हार गये। सेनापति और सैनिक लोग वहाँ का माल-खजाना लूटकर सुंदर-सुंदर सौगातें सिकंदर को भेंट करते जा रहे थे। हीरे-जवाहरात, स्वर्ण के अम्बार देखकर सिकंदर का मन खुशी से छलक उठा था, ''बड़ी विजय... सुंदर विजय... वाह... वाह... !''

इतने में एक सेनापति ने सिकंदर के आगे एक छोटी पेटी रखी। सिकंदर ने देखा कि चंदन की लकड़ी से बनी है, उस पर स्वर्ण की नक्काशी है और हीरे-जवाहरातों से जड़ी है। सिकंदर पेटी को देख के दंग रह गया। सोचने लगा : 'छोटी-सी पेटी है पर छोटी नहीं है, बहुत कुछ है इसमें। काश ! मिल जाय वह कारीगर जिसने यह पेटी बनायी है तो उसके हाथ चूम लिये जायें।'

उसने सेनापति से पूछा : ''कहाँ से लाये ?''

सेनापति ने कहा : ''किसी जौहरी को लूटा। पहले तो वह बता नहीं रहा था। जब उसको डाँटा-फटकारा तो उसने अच्छे-से-अच्छी, सारभूत यह चीज निकालकर दे दी और इसको देखते ही मुझे हुआ कि आपके चरणों में समर्पित कर दी जाय।''

सिकंदर ने विचार-विमर्श के लिए बुद्धिशाली व्यक्तियों को बिठाया कि 'इतनी प्यारी पेटी में क्या रखा जाय ?'

किसी बुद्धिमान विचारक ने कहा : ''राजाधिराज का कोई अति कीमती वस्त्र इसमें रखा जाय क्योंकि वह निकट की चीज है।''

संतों की मामूली बातें महान उपदेश होते हैं। चित्त में पड़ी हुई गाँठें उनके शब्दमात्र से छिद जाती हैं।

'छोटी-सी पेटी है पर छोटी नहीं है, बहुत कुछ है इसमें। काश ! मिल जाय वह कारीगर जिसने यह पेटी बनायी है तो उसके हाथ चूम लिये जायें।'

किसीने कहा : ''राज-खजाने की कुंजियाँ रखें।'' किसीने कहा : ''कीमती हीरे-जवाहरात रखे जायें।'' लेकिन सिकंदर संतुष्ट नहीं हुआ। वह खुद भी चिंतित था कि क्या रखा जाय ?

सिकंदर सोच-विचार में डूबा था। वह सोच रहा था, 'मैं महान बना, ऐसा बना, लड़ाकू बना, वीर बना... किंतु इस वीरता की जननी कौन-सी चीज है ? मुझे महान किसने बनाया ? मुझे वीर किसने बनाया ? हजारों-हजारों लोग जो सलाम भरते हैं, वह सलाम लेने की योग्यता मुझमें आयी कहाँ से ? बचपन में कोई ग्रंथ पढ़ा था, कोई पुस्तक पढ़ी थी, कोई वाक्य सुना था।'

वाक्यों का इतना मूल्य है कि मरे हुए आदमी में जान डाल देते हैं।

हनुमानजी को भी जब जाम्बवान ने सुनाया कि 'रामकाज के लिए तुम्हारा जन्म हुआ है। तुम कोई जैसे-तैसे नहीं हो, तुम पवनसुत हो, तुम सब कर सकते हो।' तब हनुमानजी में छिपा हुआ ओज

हनुमानजी को भी जब जाम्बवान ने सुनाया कि 'तुम कोई जैसे-तैसे नहीं हो, तुम पवनसुत हो, तुम सब कर सकते हो।' तब हनुमानजी में छिपा हुआ ओज प्रकट हुआ।

प्रकट हुआ।

राजस्थान के वीरसिंह राजा के पास पहले राज्य नहीं था। एक बार उसके घर में चोर घुसे। उस क्षत्रिय की पत्नी जगी। बोली : ''पतिदेव ! घर में तीन चोर घुसे हैं।'' वीरसिंह बोलता है : ''वे तीन हैं, मैं अकेला हूँ।'' पत्नी ने कहा : ''आप तो वीरसिंह हैं। वीर भी हैं और सिंह भी हैं। जंगल में सैकड़ों हाथियों का टोला हो लेकिन एक सिंह आ जाता है तो हाथी की मजाल है कि ठहरे ?''

वीरसिंह की चेतना जगी, उठायी तलवार और भगाया तीनों को। उसके बाद उसमें वीरता आती गयी, आती गयी और वह राजा हो गया।

जैसे भीतर ही वीरता छिपी है, ऐसे ही तुम्हारे अंदर ब्रह्मत्व भी छिपा है, तुम्हारे अंदर परमात्म-तत्त्व भी छिपा है। वीरता की याद आ जाय, बड़े-बड़े काम करने की याद आ जाय, उसके बावजूद भी तुम्हें अपनी याद जरूर आनी चाहिए और अपनी याद जब तक नहीं आती तब तक विद्या की याद या वीरता की याद यह कोई आखिरी याद नहीं है।

सिकंदर सोच रहा है, 'क्या रखूँ इस पेटी में ?' याद आया कि 'रोम के महाकवि होमर की लिखी एक कविता ने मुझे प्राण दिये हैं। 'इलियेड' नाम के ग्रंथ में वह कविता है। इस पेटी में वह ग्रंथ रख दिया जाय। हीरे-जवाहरात से भी कीमती वह पुस्तक है।'

लेकिन स्वामी रामतीर्थ से कोई पूछे कि ऐसी पेटी आपको दी जाय तो आप इसमें क्या रखोगे ? स्वामी रामतीर्थ कहेंगे : ''मैं इसमें श्री वाल्मीकि मुनि प्रणीत 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' रखूँगा। क्योंकि अत्यंत आश्चर्यजनक और सर्वोपरि श्रेष्ठ ग्रंथ, जो इस संसार में सूर्य के तले कभी लिखे गये, उनमें से 'श्री योगवासिष्ठ' एक ऐसा ग्रंथ है जिसे पढ़कर कोई भी व्यक्ति इस मनुष्यलोक में आत्मज्ञान पाये बिना नहीं रह सकता है।''

राजा जनक से कोई पूछे कि ऐसी पेटी आपके पास हो तो आप क्या रखोगे ? राजा जनक कहेंगे : ''अष्टावक्र मुनि के वचन रखूँगा। 'अष्टावक्र गीता' रखूँगा। महापुरुषों के वचन रखूँगा, सत्शास्त्र रखूँगा।''

आज के युवाओं को पूछें : ऐसी पेटी आपको दी जाय तो उसमें आप क्या रखेंगे ? तो वे कहेंगे : (पूज्य बापूजी के आश्रम से प्रकाशित) 'युवाधन सुरक्षा, ईश्वर की ओर एवं जीवन विकास'- जिन्होंने खपे, थके, ढले जीवन को संयमी, साहसी, समाज व संत के कार्य के काबिल एवं परमात्मप्राप्ति के योग्य बना दिया।

सत्शास्त्रों के, महापुरुषों के वचन हमें उन्नत करने में कितनी अहं भूमिका निभाते हैं ! वे हममें सात्विक प्राणबल भर देते हैं तथा हमें अपनी सुषुप्त शक्तियों की, अपने ब्रह्मत्व की याद दिला देते हैं। वे हमारा जीवन बदलने का सामर्थ्य रखते हैं। उनसे प्रेरणा लेकर कइयों ने लौकिक तो कइयों ने आध्यात्मिक सफलता प्राप्त की है। आदरपूर्वक उनका पठन, श्रवण, मनन करो ताकि ऑउनका कोई वचन हृदय में बस जाय या दिल में चोट कर जाय और अपना जीवन परम उन्नति के रास्ते चल पड़े।

- सत्संग से

यह संसार कायरों के लिए नहीं है। भागने का प्रयत्न मत करो। सफलता या असफलता की परवाह मत करो।

? क्यों बढ़ रहा है

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अफ्रीका के सहारा मरुस्थल में खाद्य आपूर्ति बंद हो जाने से मित्र राष्ट्रों की सेनाओं को तीन दिन तक अन्न-जल कुछ भी प्राप्त नहीं हो सका। रेगिस्तान पार करते-करते ७०० सैनिकों की टुकड़ी में से मात्र २१० सैनिक ही जीवित बच पाये। इनमें ८०% सैनिक हिन्दू थे। इस घटना का विश्लेषण कर विशेषज्ञों ने निष्कर्ष निकाला कि 'वे निश्चय ही ऐसे पूर्वजों की संतानें थीं, जिनके रक्त में तप, तितिक्षा, उपवास, सहिष्णुता व संयम का प्रभाव रहा होगा। वे अवश्य ही श्रद्धापूर्वक कठिन व्रतों का पालन करते रहे होंगे।'

इस उदाहरण से हम संस्कारों के चिरकालीन प्रभाव को समझ सकते हैं। किसी भी पीढ़ी के संस्कार आंशिक रूप से अगली अनेक पीढ़ियों तक बने रहते हैं। दीर्घ काल तक चिंतन-ध्यान में तल्लीन रहकर स्वयं सच्चा सुख प्राप्त करनेवाले तथा फिर उसे प्राणिमात्र को प्रदान करने में संलग्न रहनेवाले ऋषि-मुनियों की यह पावन धरा है और हम सब उनके वंशज हैं। हमारी रगों में उन्हींका खून बह रहा है और दिल में उनके संस्कार अभी भी वास कर रहे हैं। इस देश की संतानों को आज भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संतों-महापुरुषों के सत्संग का लाभ एवं उसके द्वारा जीवन जीने की कला का ज्ञान मिल रहा है। इसलिए पाश्चात्य अंधानुकरण से काफी पतन होने के बाद भी भारत के लोगों में विदेशी लोगों से अधिक स्वास्थ्य-बल, मानसिक एकाग्रता, बौद्धिक समझ तथा जीवन में अमन-चैन देखा जा सकता है।

जो प्रतिकूलताओं को अपनाते हैं, ईश्वर उनके सम्मुख रहते हैं।

अमेरिका के राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने अमेरिका के विद्यार्थियों की दुरावस्था व भारतीय विद्यार्थियों की बुद्धिमत्ता पर अपने देशवासियों का ध्यान आकृष्ट करते हुए चिंता व्यक्त की है। बुश ने वाशिंगटन के एक स्कूल में कहा कि 'अगर अमेरिकी बच्चे अभी नहीं सँभलते हैं तो सारी नौकरियाँ भारत और चीन की ओर चली जायेंगी।' उन्होंने स्वीकार किया कि भारत के छात्र गणित, विज्ञान जैसे विषयों में बहुत मेधावी होते हैं।

जाँच एजेंसियों की रिपोर्ट से विस्मित बुश की चिंता को और बढ़ानेवाली बात यह है कि भारतीयों ने अपनी बुद्धिमत्ता के बल पर दुनिया भर में अपनी धाक जमा ली है। अमेरिका में भी सूचना-तकनीक से लेकर जैव-तकनीक तक और शिक्षण से लेकर व्यवसाय तक के कामों में भारतीय मूल के लोगों की संख्या लगातार बढ़ रही है। अमेरिका की पेशेवर व अन्य सेवाओं में ६०% पदों पर भारतीयों का बोलबाला है। चाहे अमेरिका के प्रतिष्ठित अंतरिक्ष संगठन 'नासा' का तकनीक व प्रबंधकीय विभाग सँभालने की बात हो या सॉफ्टवेयर केन्द्र 'सिलिकॉन वैली' का कामकाज देखने की बात हो, हर जगह भारतीय मूल के लोगों का ही बोलबाला है।

अमेरिका के लिए हैरानी की बात यह है कि विपुल मात्रा में संसाधन उपलब्ध होते हुए भी अमेरिकी छात्र सिर्फ गणित, विज्ञान ही नहीं अपितु भाषा आदि अन्य कई मामलों में काफी पीछे हो गये हैं।

ऐसा क्यों हो रहा है ?

'कोकीन' नामक नशीली दवा के व्यसनी और **कई शारीरिक एवं मानसिक रोगों से ग्रस्त पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक डॉ. सिग्मंड फ्रायड के विकृत मनोविज्ञान को स्वीकार करने के कारण पाश्चात्य जगत को बुद्धि की मंदता तथा विभिन्न शारीरिक और मानसिक रोगों का शिकार होना पड़ा है।** इस मनोविज्ञान को पढ़कर पाश्चात्यों में कौमार्य अवस्था से ही मुक्त साहचर्य (Free sex) करनेवालों की वृद्धि हुई व उन्हें अपने बल, बुद्धि एवं स्वास्थ्य की भारी हानि उठानी पड़ी है।

अब पश्चिम के मनोवैज्ञानिकों ने फ्रायड की गलती को स्वीकार किया है और एडलर एवं कार्ल

भारतीयों का बोलबाला

गुस्ताव जुंग जैसे प्रखर मनोवैज्ञानिकों ने फ्रायड की कड़ी आलोचना की है। आज के बड़े-बड़े विदेशी डॉक्टर व मनोवैज्ञानिक भी भारत के ऋषि-मुनियों की ब्रह्मचर्य-विषयक विचारधारा एवं उनकी खोजों का समर्थन करते हैं। डॉ. ई. पैरियर का कहना है : ''यह एक अत्यंत झूठा विचार है कि पूर्ण ब्रह्मचर्य से हानि होती है। नवयुवकों के शरीर, चरित्र और बुद्धि का रक्षक पूर्ण ब्रह्मचर्य ही है।''

डॉ. मोन्टेगाजा कहते हैं : ''सभी मनुष्य, विशेषकर नवयुवक ब्रह्मचर्य के लाभों का तत्काल अनुभव कर सकते हैं। इससे स्मृति की स्थिरता एवं धारण व ग्रहणशक्ति बढ़ जाती है। बुद्धिशक्ति तीव्र हो जाती है, इच्छाशक्ति बलवती हो जाती है।''

डॉ. डिओ लुई कहते हैं : ''शारीरिक बल, मानसिक ओज तथा बौद्धिक कुशाग्रता के लिए वीर्य का संरक्षण परम आवश्यक है।''

ब्रह्मचर्य का पालन करने से शारीरिक एवं मानसिक स्तर पर कल्पनातीत विकास होता है और ब्रह्मचर्य का पालन न करने से शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्तर पर भारी हानि होती है - यह बात अब वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध हो चुकी है । 'इन्नोसन्टी रिपोर्ट कार्ड नंबर ३' के अनुसार ब्रह्मचर्य का पालन न करने के कारण अमेरिका में ३० लाख किशोर-किशोरियाँ यौन रोगों के शिकार होते हैं । २५ प्रतिशत किशोर-किशोरियाँ किसी-न-किसी यौन रोग से पीड़ित हैं । एड्स के नये रोगियों में २५ प्रतिशत २२ वर्ष से छोटी उम्र के होते हैं । असुरक्षित यौन व्यवहार करनेवालों में ५० प्रतिशत को गोनोरिया, ३३ प्रतिशत को जैनिटल हर्पीस और १ प्रतिशत को एड्स का रोग होता है । अमेरिका की सरकार किशोरियों के गर्भवती होने और अविवाहित अवस्था में माँ बनने की समस्या तथा ऊपर बताये हुए रोगों की समस्या से निजात पाने के लिए करोड़ों डॉलर खर्च करके अमेरिका के स्कूलों में संयम की शिक्षा देती है । फिर भी उनको सफलता नहीं मिलती । यदि वे विद्यार्थियों की मानसिक क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से और मानसिक रोगों से उनको बचाने के लिए भारतीय योग विज्ञान के अनुसार उचित मार्गदर्शन के साथ 'युवाधन सुरक्षा' जैसी पुस्तकों का प्रचार करें तो उनको विशेष सफलता मिल सकती है । क्योंकि 'द हेरिटेज सेन्टर फॉर डेटा एनालिसिस' की एक रिपोर्ट से यह सिद्ध हो चुका है कि ब्रह्मचर्य का पालन न करनेवाले लड़के-लड़कियाँ सतत डिप्रेशन जैसे मानसिक रोगों के शिकार हो जाते हैं । इससे यह सिद्ध होता है कि ब्रह्मचर्य का पालन न करने से मानसिक स्वास्थ्य की कितनी भारी हानि होती है । ऐसे विद्यार्थियों को अमेरिका के राष्ट्रप्रमुख गणित, विज्ञान आदि सीखने का कितना भी उपदेश दें, उससे उनकी मानसिक योग्यता बढ़ नहीं सकती । उनको मानसिक योग्यता बढ़ाने के लिए भारतीय संस्कृति के महापुरुषों द्वारा उपदिष्ट ब्रह्मचर्य-पालन के सिद्धांत की शरण आना ही पड़ेगा ।

जब ब्रह्मचर्य के पालन से शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक लाभ होते हैं और ब्रह्मचर्य का पालन न करने से शारीरिक, मानसिक और सामाजिक हानि होती है, यह बात वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध हो चुकी है, तब इसके विपरीत शिक्षा देनेवाले सेक्सोलॉजिस्ट, मनोवैज्ञानिक आदि के विभिन्न वर्तमान पत्रों एवं सामयिकों में **भारतीय युवावर्ग को गुमराह करनेवाले प्रकाशनों पर सरकार को पाबन्दी लगानी चाहिए और देशप्रेमी नागरिकों को ऐसे प्रकाशनों की होली जलाकर उनका सामूहिक बहिष्कार करना चाहिए ।**

विपत्ति से बढ़कर अनुभव सिखानेवाला कोई विद्यालय नहीं ।

राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि संत श्री आसारामजी आश्रम ट्रस्ट, दिल्ली ९ से ११ जून २००६ के दौरान 'विश्व शांति सत्संग समारोह' आयोजित कर रहा है ।

गरीबों और पिछड़ों को ऊपर उठाने के आश्रम के कार्य भविष्य में भी चालू रहने चाहिए । मानव-कल्याण के लिए, विशेषतः प्रेम व भाईचारे के संदेश के माध्यम से, किये जा रहे विभिन्न आध्यात्मिक एवं मानवीय प्रयास समाज की उन्नति के लिए सराहनीय हैं ।

इस अवसर पर आश्रम से संबंधित सभी लोगों को अपनी शुभकामनाएँ और बधाई देता हूँ तथा उनकी सफलता की कामना करता हूँ ।

(A.P.J. Abdul Kalam)

सारस्वत्य

कुणाल अग्रवाल

आई.ए.एस. सहित कई परीक्षाओं में सफलता

मैंने पूज्य बापूजी से सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली है और मंत्र का नियमित जप करता हूँ । इससे मेरी पढ़ने की क्षमता अधिक हो गयी और उसीका यह सुफल है कि मैंने आई.ए.एस. (IAS) की परीक्षा में ११३वाँ स्थान प्राप्त किया है। परीक्षा के लिए मैंने इतनी पढ़ाई नहीं की, जितनी इस सफलता के लिए सारस्वत्य मंत्र ने मेरी सहायता की है।

इससे पूर्व मैंने बी.कॉम. में पूरी यूनिवर्सिटी (विश्वविद्यालय) में टॉप किया। 'गृह मंत्रालय, भारत सरकार' द्वारा आयोजित केन्द्रीय खुफिया अधिकारी परीक्षा में पूरे भारत के ४ लाख प्रतियोगियों में प्रथम स्थान प्राप्त किया। 'स्टेट बैंक ऑफ इंडिया' के 'प्रोबेशनरी अधिकारी' की परीक्षा में पूरे भारत में १२वाँ स्थान प्राप्त किया ।

परंतु यह सब गुरुदेव की दासी (माया) की कृपा है, जो पूज्य बापूजी से प्राप्त दीक्षा के प्रभाव से स्वाभाविक ही अनुकूल हो जाती है। गुरुजी के श्रीचरणों में विनती है कि आपश्री की कृपा से अब मैं परम सत्य परमात्मा को पाने के मार्ग पर चल पड़ूँ ।

– कुणाल अग्रवाल,
पटियाला (पंजाब)

मंत्रदीक्षा के सुंदर परिणाम

अनमोल गर्ग

रविन्द्र यादव

बीजगणित के दो नये सूत्र खोजे

मैंने पूज्य बापूजी से सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली है । मैं 'लैंसर्स सीनियर सेकेन्डरी विद्यालय, सिकंदराबाद, जि. बुलन्दशहर' का छात्र हूँ । पूज्य बापूजी हमारे विद्यालय को दो बार अपने चरणकमलों से पवित्र कर चुके हैं । हमारी प्रधानाचार्या भी बापूजी की शिष्या हैं और पूज्य बापूजी के द्वारा दिये गये दिव्य संस्कारों से हम बच्चों को पोषित करती रहती हैं ।

पूज्य बापूजी के आशीर्वाद और माँ के प्रोत्साहन से गणित में कमजोर होते हुए भी मैंने खोज प्रारम्भ की और सफल हुआ । अखबारवालों ने भी इस खोज की प्रशंसा की । अगर पूज्य सद्गुरुदेव का सत्संग, दीक्षा व आशीर्वाद न मिलता तो यह सफलता सम्भव न थी ।

1. $a^2+b^2 = (a+b)\left(a+b - \frac{2ab}{a+b}\right)$ when $a \neq -b$

2. $a^2+b^2 = (a-b)\left(a-b + \frac{2ab}{a-b}\right)$ when $a \neq b$

पूज्य बापूजी की कृपा से उपरोक्त दो सूत्रों को 'मानव संसाधन विकास मंत्रालय' द्वारा प्रमाणपत्र मिल चुका है और अन्य चार सूत्रों पर कार्य कर रहा हूँ । मुझे उम्मीद है कि गुरुदेव की कृपा से आगे भी सफलता जरूर मिलेगी ।

– अनमोल गर्ग

बिलासपुर, जि. गौतमबुद्धनगर (उ.प्र.)

'आंध्र प्रदेश सैनिक स्कूल' प्रवेश परीक्षा में प्रथम स्थान

आठवीं कक्षा का प्रतिभावान विद्यार्थी रविन्द्र यादव आश्रम के 'बाल संस्कार केन्द्र' का नियमित छात्र है। विशाखापट्टणम् में इसे पूज्य बापूजी से सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा मिली । वह पूरी निष्ठा के साथ जप, ध्यान में जुट गया। वह पूरे स्कूल में प्रथम आता है।

'आंध्र प्रदेश सैनिक स्कूल' में प्रवेश हेतु ली गयी प्रतियोगिता- स्पर्धा में, जहाँ हजारों की संख्या में बच्चों ने भाग लिया था, वहाँ भी प्रथम स्थान प्राप्त कर वह चुने गये २० छात्रों में शिखर पर रहा।

– संचालक, बाल संस्कार केन्द्र, विशाखापट्टणम् (आं.प्र.)

सद्गुरु से प्राप्त मंत्र का श्रद्धापूर्वक जप करने से गुरुदेव की अधिकाधिक कृपा मिलती है, उनका दिव्य प्रेम मिलता है तथा उनकी दिव्य शक्तियों के अनुदान से हम अनुगृहीत होते हैं ।

संतों का सत्संग व उनसे प्राप्त दीक्षा महान परिवर्तन लाती है ।

शरीर स्वास्थ्य

श्रावण मास में वरदानस्वरूप बेलपत्र
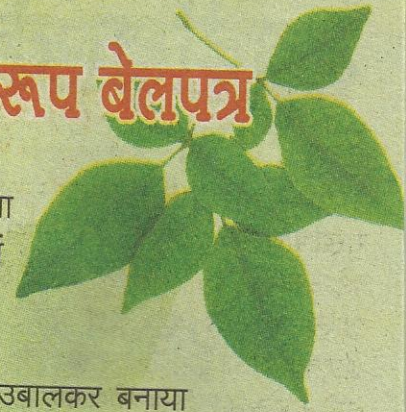
श्रावण मास भगवान शिवजी की पूजा-उपासना के लिए महत्त्वपूर्ण मास है। इन दिनों में शिवजी को बेल के पत्ते चढ़ाने का विधान हमारे शास्त्रों में है। इसके पीछे ऋषियों की बहुत बड़ी दूरदर्शिता है।

इस ऋतु में शरीर में वायु का प्रकोप तथा वातावरण में जल-वायु का प्रदूषण बढ़ जाता है । आकाश बादलों से ढका रहने से जीवनीशक्ति भी मंद पड़ जाती है। इन सबके फलस्वरूप संक्रामक रोग तेज गति से फैलते हैं। इन दिनों में शिवजी की पूजा के उद्देश्य से घर में बेल के पत्ते लाने से उसके वायु शुद्धिकारक, पवित्रतावर्धक गुणों का तथा सेवन से वात व अजीर्ण नाशक गुणों का भी लाभ जाने-अनजाने में मिल जाता है।

उनके सेवन से शरीर में आहार अधिकाधिक रूप में आत्मसात् होने लगता है। मन एकाग्र रहता है, ध्यान केन्द्रित करने में भी सहायता मिलती है।

परीक्षणों से पता चला है कि बेल के पत्तों का सेवन करने से शारीरिक वृद्धि होती है। बेल के पत्तों को उबालकर बनाया गया काढ़ा पिलाने से हृदय मजबूत बनता है।

औषधि-प्रयोग

१. बेल की पत्तियों के १०-१२ ग्राम रस में १ ग्राम काली मिर्च व १ ग्राम सेंधा नमक का चूर्ण मिलाकर रोज सुबह-दोपहर-शाम सेवन करने से **अजीर्ण में लाभ** होता है।

२. बेलपत्र १०-१२ ग्राम और ७ नग काली मिर्च एक साथ पीसकर १०-१२ ग्राम मिश्री के साथ शरबत बनायें और उसे सुबह-दोपहर-शाम पीयें तो **पेट की पीड़ा** मिटेगी।

३. बेलपत्र, धनिया व सौंफ को समान मात्रा में लेकर कूट लें। १० से २० ग्राम यह चूर्ण शाम को १०० ग्राम पानी में भिगो दें और सुबह पानी को छानकर पी जायें । इसी प्रकार सुबह भिगोकर शाम को पीयें। इससे स्वप्नदोष कुछ ही दिनों में ठीक हो जायेगा। यह **प्रमेह एवं स्त्रियों के प्रदर में भी लाभदायक है।**

जो शत्रु तुम पर आक्रमण करता है, उससे मत डरो । उन मित्रों से डरो जो तुम्हारी चापलूसी करते हैं ।

पुत्रदा एकादशी

श्रावण मास के शुक्लपक्ष (५अगस्त२००६) में जो एकादशी होती है, वह 'पुत्रदा' के नाम से विख्यात है । वह मनोवांछित फल प्रदान करनेवाली है । माहिष्मतीपुर के राजा महीजित् को इसी एकादशी के पुण्यफल के प्रताप से पुत्रप्राप्ति हुई थी । इसका माहात्म्य सुनकर मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है तथा इहलोक में सुख पाकर परलोक में स्वर्गीय गति को प्राप्त होता है । यह माहात्म्य आप आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'एकादशी व्रत-कथाएँ' में पढ़ सकते हैं ।

कामभोगों का सुख केवल सुखाभास ही

कामभोग में मिलनेवाला सुख (असल में सिर्फ सुखाभास ही) क्षणिक और निम्न होने पर भी जीव को उसका प्रबल आकर्षण रहता है । उससे संयम व आत्म-रमणता का सुख कोटि गुना उच्च और शाश्वत होता है । आत्मानंद के, संयम के सुख को यदि महासागर के समान व्यापक और गहरा कहें तो उसकी तुलना में दैहिक भोगों का सुख एक बूँद जितना भी नहीं गिना जायेगा । स्वामी विवेकानंदजी कहते हैं : 'उच्च विचारों का मनन करना निम्न वासनाओं से मुक्त होने का श्रेष्ठ उपाय है ।'

इसी प्रकार उच्च आदर्श संयम को श्रद्धापूर्वक लक्ष्य में रखकर निम्न, दुष्ट काम-विकार की पकड़ से बचा जा सकता है । ठीक से विचार करने पर संयम सुखरूपी सुवर्ण की प्राप्ति के लिए विकारी सुखरूपी पीतल को त्यागने में कष्ट न होगा।

मन-इन्द्रियाँ वास्तव में हमारी शत्रु नहीं हैं । उनकी अधोगामी गति का कारण पूर्वजन्मों एवं पूर्वजीवन के संस्कार हैं । इसलिए सच्चिंतन द्वारा उन कुसंस्कारों को बाधित कर मन-इन्द्रियों की गति को ऊर्ध्वगामी बनाने में ही व्यक्ति की कुशलता है । **– श्री मलूकचंद शाह**

स्वप्नदोष से पीड़ित युवाओं के लिए वरदान

वी र्य स्त म्भा स न

जो स्वप्नदोष के शिकार हो जाते हैं, उनका वीर्य क्षीण होता रहता है । उनके मन में अनेक प्रकार की चिंताएँ उत्पन्न होती हैं और शरीर कृश होने लगताहै । ऐसे युवानों के लिए 'वीर्यस्तम्भासन' डूबते को नौका का सहारा जैसा है ।

विधि :

खड़े होकर दोनों पैरों को फैला दें । इसके बाद दोनों हाथों को कमर के पीछे ले जाकर बायें हाथ से दायें हाथ की कलाई पकड़ लें । बायें पैर को घुटने से मोड़कर नाक से उसके अँगूठे को स्पर्श करें । इस आसन को पैर बदलकर पुनः करें ।

लाभ :

१. इसके अभ्यास से भुजाओं, पैरों, कमर तथा हथेलियों में शक्ति व सुदृढ़ता आती है और कद बढ़ता है ।
२. स्वप्नदोष आदि वीर्य-विकार नष्ट होते हैं । इसके नित्य अभ्यास से वीर्य ऊर्ध्वगामी होता है ।
३. यह नेत्रज्योति बढ़ाता है ।
४. गुदा-संबंधी बीमारियों के लिए लाभदायी है।
५. कई मूत्रविकार तथा मधुमेह आदि रोग इसके अभ्यास से नष्ट होते हैं ।

गृहस्थ को चाहिए कि वह धन कमाने की अपेक्षा बच्चों के चरित्र का ख्याल रखे ।

सूर्यपुत्री यमुनाजी के तट पर बसी गुरु गोविंद सिंहजी की तपःस्थली व कर्मस्थली पांवटा साहिब में २८ व २९ मई को पूज्यश्री का सत्संग सम्पन्न हुआ । दशम पातशाह गुरु गोविंद सिंह द्वारा नींव रखी गयी इस भूमि पर ज्ञान, भक्ति, योग के मर्मज्ञ पूज्य बापूजी ने अपने अनुभूतियुक्त अमृत वचनों से, अपनी पावन उपस्थिति से यहाँ के लोगों में आरोपित ज्ञान, भक्ति के बीज को पल्लवित करने का सुगम मार्ग दिखाया ।

नवनिर्मित देवधर (जि. यमुनानगर, हरियाणा) और नकुर (जि.सहारनपुर, उ.प्र.) आश्रम में २९ मई को पूज्यश्री का प्रथम पदार्पण हुआ ।

अम्बाला रोड पर स्थित बापू के धाम
२९ मई की एक शाम रही सहारनपुर के नाम

एक शाम ही सही पांवटा साहिब से मुजफ्फरनगर जाते हुए पूज्यश्री के श्रीचरण सहारनपुर आश्रम में पड़े । घंटों इन्तजार के बाद शाम साढ़े छः बजे जब लोक लाड़ले पूज्य बापूजी का पदार्पण हुआ तो स्थानीय भक्तों का हृदयकमल खिल उठा, नेत्र अविचल और पैर थिरक उठे 'हरिॐ हरिॐ हरिॐ हरिॐ...' की धुन में । दोपहर की चिलचिलाती गर्मी के क्षणों में दर्शन-सत्संग को बेताब लोग भूल गये वो सब और डूब गये दर्शन-सत्संग के विलक्षण आनंद में । उल्लेखनीय है कि गत वर्ष भी इसी तिथि को पूज्यश्री का शुभ आगमन हुआ था ।

२९ मई की रात ही पूज्यश्री मुजफ्फरनगर पहुँच गये, जहाँ अगले दो दिन ३०-३१ मई को राजकीय इन्टर कॉलेज के विशाल मैदान पर सत्संग सम्पन्न हुआ।

नौ वर्ष पूर्व यहाँ पूज्यश्री का भव्य सत्संग सम्पन्न हुआ था । दीर्घकाल के अंतराल में पधारे पूज्य गुरुवर के दर्शन-सत्संग के लिए श्रद्धालु भक्त उमड़ पड़े थे । पूज्यश्री ने अत्यन्त आत्मीयतापूर्ण भाव से उपस्थित भक्तों को 'मुजफ्फरियों' कहकर सम्बोधित किया और फिर बह चली भक्तिरस की गंगा । भगवन्नाम-संकीर्तन के क्षणों में भक्तवृंद भावविभोर हो झूम उठे, जिसे देखकर पूज्य गुरुवर ने आशा व्यक्त की कि मुजफ्फरनगर में भक्ति एवं आस्था की बढ़ती गति से अपराध खुद ही कम हो जायेंगे ।

३१ मई की शाम पूज्यश्री मुजफ्फरनगर सत्संग की पूर्णाहुति कर रेलमार्ग से दिल्ली पहुँचे और अगले दिन पालमपुर (हि.प्र.) के निकट धौलाधर पर्वत शृंखला की ऊँचाई पर बसे गाँव सुकंडी स्थित आश्रम पहुँचे । हिमाचल सरकार ने लोकलाड़ले संत शिरोमणि पूज्य गुरुवर को राज्य-अतिथि घोषित किया। पूज्यश्री ने प्रदेश सरकार का धन्यवाद किया और कहा कि संतों का सत्कार और राज्य अतिथि बनाना देवभूमि की परंपरा है । यहाँ के लोग अपनी सादगी और भाईचारे के लिए जाने जाते हैं । आनेवाली पीढ़ी को भी यही संस्कार ग्रहण करने चाहिए ।

पालमपुर में ३ व ४ जून को चले आध्यात्मिक महाकुंभ में हिमाचल प्रदेश के अलावा देश के विभिन्न भागों से बड़ी संख्या में आये श्रद्धालु शरीक हुए । पूज्यश्री ने आध्यात्मिकता, वैदिक संस्कृति, भक्ति, सामाजिक कुरीतियों, सुसंस्कार-सिंचन आदि विषयों पर देवभूमिवासियों को ज्ञानरुपी प्रसाद परोसा ।

९ से ११ जून को ज्येष्ठ मास का पूर्णिमा दर्शन व सत्संग महोत्सव कड़कड़डूमा (दिल्ली) में सम्पन्न हुआ । राष्ट्रीय राजधानी में उमड़े जनसैलाब को सम्बोधित करते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''मनुष्य को कर्म का फल भोगना ही पड़ता है । सौ कल्प

भी बीत जायें पर किये हुए कर्म का फल भोगे बिना कोई उपाय नहीं । बहत्तर जन्म पूर्व किये गये अपने कर्म के कारण भीष्म पितामह को शरशय्या पर लेटना पड़ा था । राजा अज को अपने कर्मों के कारण सर्पयोनि में रहना पड़ा परंतु ब्रह्मज्ञान एक ऐसा अमोघ उपाय है जो मनुष्य को कर्मों की गति से पार ले जाता है । ब्रह्मज्ञान का सत्संग सुनकर राजा अज सर्प की योनि से मुक्ति पाकर देवलोक को गये । जो ब्रह्मज्ञान का सत्संग करने-कराने में भागीदार होता है, उसकी सात पीढ़ियाँ तर जाती हैं ।''

पूज्यश्री ने नागपुर (महाराष्ट्र) से २५० कि.मी. दूर नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्र आलापल्ली के लिए २५ लाख रुपये देने की घोषणा की एवं इस क्षेत्र के पुनरुद्धार के लिए 'श्री योग वेदांत सेवा समिति' के कार्यकर्ताओं को वहाँ जाने के निर्देश दिये ।

प्रवचन के अन्तिम दिन उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल मोतीलाल वोरा भी शरीक हुए । उन्होंने दर्शन-सत्संग व पूज्यश्री को माल्यार्पण कर आशीर्वाद प्राप्त किया ।

गुरुपूर्णिमा दर्शन-सत्संग का शुभारंभ चण्डीगढ़ में १६ से १८ जून तक तीन दिवसीय सत्संग से हुआ । उल्लेखनीय है कि पिछले तीन वर्षों से गुरुपूर्णिमा महोत्सव का प्रथम चरण चण्डीगढ़ आश्रम ही रहा है । आश्रम-परिसर में निर्मित स्थायी सत्संग पंडाल के अलावा वहाँ और विशाल पंडाल भी लगाया गया था, जो श्रद्धालुओं की विराट संख्या से खचाखच भरा रहा । पूज्यश्री ने भारतीय संस्कृति की गरिमा का बखान करते हुए कहा : ''भारतीय संस्कृति न तो नगरीय संस्कृति है न ही ग्रामीण बल्कि 'आरण्यक संस्कृति' है । एकांत में, वन में इस सनातन संस्कृति का उद्गम हुआ है । इस 'आरण्यक संस्कृति' में उत्पन्न 'आरण्यक विद्या' विलक्षण है । जब भगवान श्रीकृष्ण युद्ध के मैदान में 'आरण्यक विद्या' अर्जुन को दे सकते हैं तो मैं यह विद्या तुम्हारे घर में क्यों न लाऊँ !''
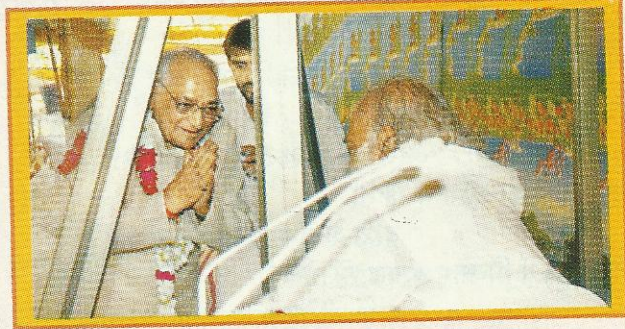
पूज्य बापूजी के दर्शन-सत्संग हेतु कड़कड़डूमा (दिल्ली) में पधारे उ.प्र. के भूतपूर्व राज्यपाल, पूज्य बापूजी के पुराने सत्संगी, अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी के कोषाध्यक्ष श्री मोतीलाल वोरा ।

'ऋषि प्रसाद' के क्षेत्रिय कार्यालय का शुभारंभ

पटना । कदमकुआँ स्थित 'संत श्री आसारामजी आश्रम' में 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के क्षेत्रिय कार्यालय का उद्घाटन बिहार राज्य के 'नगर विकास मंत्री' श्री अश्विनी कुमार चौबे के हाथों सम्पन्न हुआ ।

बिहार के जनसामान्य के बीच स्नेह, सद्भाव और सुख-शांतिमय वातावरण विकसित करने के लिए अधिकाधिक लोगों तक 'ऋषि प्रसाद' पहुँचाने का संकल्प उपस्थित जनता ने लिया । इस अवसर पर आश्रम द्वारा गरीबों में प्रति माह निःशुल्क अन्न-वितरण हेतु 'राशन कार्ड' बाँटे गये तथा निःशुल्क अन्न-वितरण भी किया गया ।

पूज्य बापूजी के आगामी कार्यक्रम

दिनांक	शहर	स्थान	संपर्क
१ और २ जुलाई	दिल्ली	जापानी पार्क, सेक्टर १०, रोहिणी	९८१०००१३०५, ९३१२२१४६९०.
२ से ३ जुलाई	भोपाल (म.प्र.)	संत श्री आसारामजी आश्रम, गाँधीनगर	(०७५५) २७४२५००, २७१३०५५.
५ से ७ जुलाई	नागपुर	रेशमबाग मैदान	(०७१२) २६६७२६७-६८.
८शाम से ९दोप. जुलाई	आलंदी (पुणे)	संत श्री आसारामजी आश्रम केळगाव, श्रीक्षेत्र आळंदी	(०२१३५) २३५३३३. (०२०)२६०५००४३.
११ और १२ जुलाई	अमदावाद	संत श्री आसारामजी आश्रम	(०७९) २७५०५०१०-११

न जाना तो क्या जाना ?

आया त्यौहार गुरु पूनम का तो
उत्सव और मनाना क्या ?
जब अधिकार मिला गुरुपूजन का
तो देवी-देव रिझाना क्या ?
जब आये द्वार गुरु के तो
जग में आना-जाना क्या ?
सच्चे स्नेही सद्गुरु मिले तो
दुनिया को अपनाना क्या ?
सद्गुरु को अपना मान लिया तो
औरों से निभाना क्या ?
स्वामी एक वही हैं अपने,
औरों को शीश झुकाना क्या ?
गुरुज्ञान उड़ान उड़ाय रहै तो
बुद्धि के बैल दौड़ाना क्या ?
जब पास में प्रियतम बताय रहें तो
लम्बी रेस लगाना क्या ?
जब आपा ही अपना दे रहे तो
विषय-विकारों से पाना क्या ?
जब मन-मंदिर में देव मिले तो
मंदिर-मस्जिद जाना क्या ?
जब मौन का मंत्र मिला प्यारा तो
कहना और सुनाना क्या ?
अजपा-जाप चले हरदम तो
मुख से अब चिल्लाना क्या ?
जब बूँद बने मयखाना तो
पीना और पिलाना क्या ?
गुरु-नाम नशा उतरे नहीं तो
मयखाने में जाना क्या ?
जब निर्भयनाद का पाठ पढ़ा तो
डरना और डराना क्या ?
जब समता का साम्राज्य मिला तो
परिस्थितियों से घबराना क्या ?
चट्टान, तूफान हो राह कंटीले पर
मंजिल से हट जाना क्या ?
जब राह प्रभु के चल दिये तो
पीछे कदम हटाना क्या ?
जीवन अनमोल मिला मानव,
तड़प-तड़प मर जाना क्या ?
सत्य सनातन निज आत्मा को,
ना जाना तो जाना क्या ?

– जीवन 'साधक', अमदावाद

1 July 2006
RNP.NO. GAMC 1132/2006-08
Licenced to Post without Pre-Payment
LIC NO. GUJ-207/2006-08
RNI NO. 48873/91.
DL (C) - 01/1130/2006-08.
WPP LIC.NO. U (C)-232/2006-08
G2/MH/MR-NW-57/2006-08
WPP LIC NO. NW-9/2006

Posting at Rishi Prasad PSO between 1st to 14th of E.M. Back issue at PSO-AHD * Posting at ND.PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.